2016 | अंक 22

अशिमका

राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा प्रसारित पत्रिका

वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान

देहरादून-248001

2016 | अंक 22

अश्मिका

राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा प्रसारित पत्रिका

संपादक
डॉ. (श्रीमती) मीरा तिवारी

सहायक संपादक
डॉ. गौतम रावत

संपादकीय प्रबंधक
रामबीर कौशिक

प्रकाशक
राजभाषा कार्यान्वयन समिति
वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान
देहरादून–248001

मुद्रण स्थल
एलाइड प्रिन्टर्स
84, नहर वाली गली, देहरादून (फोनः 0135–2654505)

आवरण चित्र
सासरल पास नुबरा वैली (लद्‌दाख) का विहंगम दृश्य
छायाकार
डॉ. मनीष मेहता

पत्रिका में प्रस्तुत विचार लेखकों के स्वयं अपने हैं। संपादक मंडल/विभाग/प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

विषय सूची

निदेशक की लेखनी से		i
सम्पादकीय		ii
युनिफोर्मीटेरियनिज्म	रमेश चन्द्र	1
हिमालय की वादियों में घुलता कार्बन प्रदूषण	पी.एस. नेगी	2
उत्तराखंड की प्राकृतिक आपदाएँ (एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण)	मनीष मेहता व अन्य	6
डोकरानी के शीर्ष पर	सीपिका सुन्दरियाल	14
भू–चुम्बकत्व	गौतम रावत	16
प्रकृति का स्वरूप	दल बहादुर खत्री	20
स्टीफन हाकिंग (एक महान वैज्ञानिक)	एन.के. तिवारी	25
ए पी जे अब्दुल कलाम – एक प्रेरणा	राकेश कुमार	26
विश्व हिन्दी सम्मेलन/विश्व हिन्दी दिवस तथा प्रवासी........	कान्ता मोहन रावत	27
गुब्बारे वाला	मंजु पंत	30
देव भूमि दर्शन	अमर देव बहुगुणा	33
स्मृतियों में कैद लम्हे : यात्रा–संस्मरण	विद्या सिंह	35
प्रताड़ित की ताड़ना	अजय कुमार बियानी	44
वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थानः एक परिचय	राकेश कुमार	46
भूख अनकही	आशीष राणा	47
भूपेन दा की सुरध्वनि	प्रदीप कुमार शर्मा	48
मन करता है	प्रदीप कुमार शर्मा	49
खुशी	जूली जायसवाल	50
पहाड़	शान्ति प्रकाश 'जिज्ञासु'	51
एक प्रश्न ?	गीता बसुमतारी	52
संस्थान समाचार		53

निदेशक की लेखनी से

संस्थान की गृह पत्रिका 'अश्मिका' का यह बाईसवाँ संस्करण है। अपने प्रथम संस्करण से ही यह पत्रिका निरन्तर गुणवत्ता के पायदानों पर बढ़ती रही है। इसमें जहाँ एक ओर संस्मरण, साहित्यिक एवम् दार्शनिक लेखों का समावेश रहा है वहीं लेखकों ने सरल एवम् सहज हिन्दी में विज्ञान के विषयों पर भी लिखने का प्रयास किया है। विगत वर्षों में इन प्रयासों में सराहनीय वृद्धि हुई है। जब तक विज्ञान एवम् प्रौद्योगिकी से सम्बन्धित लेख/आलेख व पुस्तकें हिन्दी में उपलब्ध नहीं होंगी हमारे छात्रों का विज्ञान जैसे विषयों का अध्ययन मातृ भाषा में संभव नहीं होगा और जन सामान्य की रूचि भी विज्ञान में नहीं बढ़ेगी। समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने के लिए स्तरीय वैज्ञानिक आलेख जन सामान्य की भाषा में उपलब्ध होने चाहिए। 'अश्मिका' के प्रकाशन का यह भी एक उद्देश्य है। 'अश्मिका' अपने उद्देश्यों में सफल हो एवम् भविष्य में भी उन्नति के पथ पर अग्रसर रहे यही मेरी शुभकामना है।

अनिल कुमार गुप्ता

सम्पादकीय....

इक्कीसवीं सदी के इस युग में जहाँ हर क्षेत्र में तकनीक का वर्चस्व है, वहीं भाषा के विस्तार एवम् विकास में तकनीक के रोल को नकारा नहीं जा सकता है। वर्तमान में मौजूद संचार माध्यमों के लिए किसी भाषा में सामग्री उपलब्ध करने या लिखने के लिये तकनीक की बैसाखी चाहिये ही। यदि हिन्दी की ही बात करें तो नब्बे के दशक के प्रारम्भ मे यह समस्या थी कि हिन्दी को कम्प्यूटर पर कैसे लिखा जाये व कैसे सहेजा जाए। इसका मुख्य कारण कम्प्यूटर में लिखने के लिए फोन्ट का मानकीकरण न होना था। तकनीकी विशेषज्ञों ने समाधान निकाला और हमें कई तरह के फोन्ट्स व टाइपिंग की–बोर्ड मिले। जिससे किसी स्तर तक तो सुविधा हुई परन्तु यह सर्वथा असुविधाजनक भी रहा। एक फोन्ट से दूसरे फोन्ट में बदलने पर, सामग्री को एक कम्प्यूटर से दूसरे कम्प्यूटर पर ले जाने पर या ई–मेल के माध्यम से भेजने पर सब कुछ गड़बड़ाने लगा। जिसकी वजह से कम्प्यूटर का आम प्रयोक्ता जो हिन्दी में काम तो करना चाहता है, हतोत्साहित ही हुआ। बीसवीं सदी के अन्त में विश्व भर में फोन्ट्स के मानकीकरण के प्रयासों के चलते 'यूनिकोड' का आविर्भाव हुआ। जिसमें 'देवनागरी' लिपि को भी स्थान मिला। जिसके चलते हिन्दी के अतिरिक्त वे भाषायें जिनमें देवनागरी लिपि का प्रयोग होता है, आसानी से कम्प्यूटर पर उपलब्ध होने लगीं। इन भाषाओं में कम्प्यूटर में लिखने के लिये अब विशेष साफ्टवेयरों की आवश्यकता नहीं रही। किसी भी डिजिटल डिवाइस में अब हिन्दी स्वतः ही विद्यमान है आवश्यकता केवल उसे सक्रिय करने की है। मानकीकरण के परिणाम से युनिकोड समर्थित फोन्ट में लिखी जाने वाली हिन्दी अब एक डिवाइस से दूसरी डिवाइस पर जाने पर या ई–मेल द्वारा भेजी जाने पर विकृत नहीं होती है। भारत सरकार ने भी देवनागरी–इन्सक्रिप्ट की–बोर्ड अभिन्यास और देवनागरी फोन्ट को अधिकारिक मान्यता दी है। यह सरल भी है इसमें सभी अक्षर/वर्ण दॉयें तरफ व मात्राऐं बॉऐं तरफ हैं। सप्ताह भर के अभ्यास से यह प्रभावी जान पड़ता है। अब हिन्दी में लिखना नितान्त सरल व सम्यक् हो गया है। आवश्यकता रह गई है तो केवल थोडा सा जागरूक होकर अपनी भाषा के प्रति सचेत होकर लिखने की। अधिक से अधिक सामग्री, विशेषकर वैज्ञानिक, हिन्दी में उपलब्ध कराने की।

युनिफोर्मीटेरियनिज़्म

रमेश चन्द्र
290/4 एम.डी.सी. पँचकुला, हरियाणा

अश्मिका के पृष्ठों में युनिफोर्मीटेरियनिज़्म पर चर्चा करना एक दुस्साहसपूर्ण कार्य है । परंतु इस विषय पर कुछ ज्ञानवर्धक विचार मैंने पिछले दिनों पढ़े हैं ।

युनिफोर्मीटेरियनिज़्म शब्द का प्रयोग

पृथ्वी तथा उस के इतिहास से संबंधित अपने विचार हट्टन ने वर्ष १७८८ से १७९५ ई० के मध्य विज्ञान जगत के समक्ष रखे थे। लायेल ने अपनी, सन् १८३०–३३ के मध्य प्रकाशित, तीन खण्डों वाली पुस्तक 'प्रिंसिपल्स ऑफ जिआलोजी' में इन विचारों को एक थ्योरी के रुप में प्रस्तुत किया था (एफ डी एडम्स, 'दी बर्थ एंड डवेलपमेंट ऑफ जियोलाजिकल साइंसेज', डोवर पब्लिकेशन्स, न्यू यॉर्क, १९३८, देखें पृष्ट २९९)। इस विचार संग्रह के लिये युनिफोर्मीटेरियनिज़्म शब्द का सुझाव व्हीवेल्ल ने उस पुस्तक की समीक्षा करते हुए दिया था (विकिपीडिया)।

युनिफोर्मीटेरियनिज़्म और यूनिवर्स

गत कई दशकों से मेरा विचार था कि युनिफोर्मीटेरियनिज़्म का उपयोग पृथ्वी के वैज्ञानिक अध्ययन तक ही सीमित है। परंतु विकिपीडिया के अंग्रेजी संस्करण के अनुसार युनिफोर्मीटेरियनिज़्म का प्रयोग समस्त यूनिवर्स के वैज्ञानिक अध्ययन के लिये हो रहा है। उस लेख में दी गई युनिफोर्मीटेरियनिज़्म की परिभाषा का भावात्मक अनुवाद मैंने दो वाक्यों में किया है। (१) प्राकृतिक नियम यूनिवर्स के हर भाग में समान हैं तथा यूनिवर्स के इतिहास के हर काल में भी यही नियम थे (२) जो प्राकृतिक प्रक्रियाएं यूनिवर्स के किसी भाग में आज हो रही हैं वे यूनिवर्स के हर भाग में उन्हीं परिस्तिथियों में वैसे ही होती हैं तथा वे प्रक्रियाएं यूनिवर्स के इतिहास में उन्हीं परिस्तिथियों में वैसे ही हुई थी। यह परिभाषा तथा युनिफोर्मीटेरियनिज़्म की भूवैज्ञानिक परिभाषा मूलतः एक ही है। केवल पृथ्वी के स्थान पर युनीवर्स शब्द का प्रयोग हुआ है।

विज्ञान के एक इतिहासकार ने लिखा है कि भौतिकी तथा खगोल विज्ञान के क्षेत्रों में, वर्ष १६८४ ई० में, न्यूटन ने चन्द्रमा तथा एक धूम्केतु की कक्षाओं का अनुमान लगाने के लिये अपने गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त का प्रयोग किया था (आर ए ग्रेगोरीरू 'डिसकवरी, दी स्पिरिट एंड सर्विस आफ साइन्स', मैकमिलन एंड कम्पनी, लन्दन, १९१७, देखें पृष्ठ १७१)। न्यूटन का यह प्रयास युनिफोर्मीटेरियनिज़्म की उपरोक्त आधुनिक परिभाषा के अनुकूल था।

युनिफोर्मीटेरियनिज़्म और दर्शन शास्त्र

विकिपीडिया में युनिफोर्मीटेरियनिज़्म के दार्शनिक मूल्यांकन पर चर्चा है। दर्शन शास्त्र में विचारों को विभिन्न श्रेणियों में बांटा गया है। युनिफोर्मीटेरियनिज़्म 'अ थियोरी' श्रेणी के कुछ विचारों का संग्रह है। ऐसे विचारों को हम सत्य मान करके प्रकृति के अध्ययन में उन का प्रयोग करते हैं। हम वैज्ञानिक विधि से यह नहीं परख सकते कि क्या वे विचार वास्तव में सत्य हैं (विकिपीडिया)?

यदि इस दार्शनिक विचार धारा को हम स्वीकार करें तो कदाचित युनिफोर्मीटेरियनिज़्म तथा पृथ्वी से संबंधित एक बहुचर्चित वाक्य का यह स्पष्ट अनुवाद भी करेंगे 'वर्तमान से सीख कर, शिलाओं में लिखा पृथ्वी का इतिहास हम इस विश्वास (जो वास्तव में एक एजम्पशन है) के साथ पढ़ते हैं कि प्राकृतिक नियम तथा प्रक्रियाएं सदा आज जैसे ही थे'। संकेत हैं कि युनिफोर्मीटेरियनिज़्म के दार्शनिक तत्वों पर चिंतन अभी चल रहा है।

जानकारी के स्रोत

इस लेख की कल्पना तथा विचारों का क्रम मौलिक है। समस्त जानकारी विभिन्न स्रोतों से समय समय पर प्राप्त हुई है। मुख्य स्रोतों का विवरण उपयुक्त स्थानों पर दे दिया है।

हिमालय की वादियों मे घुलता कार्बन प्रदुषण

पी.एस. नेगी
वा.हि.भूवि.संस्थान, देहरादून

लगभग 50 करोड़ वर्ष पूर्व भारतीय भू–भाग के यूरेशियन क्षेत्र से टकराने के कारण निर्मित हिमालय नामक भूआकृति विश्व की नवीनतम पर्वत श्रृंखला है। हिमालय दुरूह भौगोलिक परिस्थितियों एवं विपरीत जलवायु के साथ साथ मनोरम पर्यटक स्थलों व प्रदूषण रहित आबोहवा के लिये भी विश्व प्रसिद्ध है। (चित्र 1)। लगभग 2400–3000 किमी लम्बी एवं 150–400 किमी चौडी हिमालय पर्वत श्रृंखला अपनी विशेष जैव–विविधता, सदाबहार नदियों, पारिस्थतिकीय तंत्र, संस्कृति व सामाजिक आर्थिक परिवेश के लिये भी विख्यात है। किन्तु जलवायु परिवर्तन, विशेष कर वातावरण में फैल रहे प्रदूषण के कारण हिमालय के प्राकृतिक संसाधनों पारिस्थतिकीय सेवाओं, फसल चक्र व सामाजिक–आर्थिक जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। फलतः हिमालयी निवासियों के दैनिक जीवन की आवश्यकताओं जैसे लकड़ी, चारा, इंधन व पेयजल आदि पर भी संकट मंडराने लग गया है।

चित्र 1: गौमुखः गंगा का उद्गम स्थल।

वर्तमान समाज, विकास रूपी पहिये को तीव्र गति से घुमाकर भौतिकवादी प्रगति द्वारा अपने आपको विकसित प्रदर्शित कर गौरवान्वित महसूस कर रहा है। किन्तु सतत् विकास की अपरिपक्व समझ, अवैज्ञानिक कार्यकलापों व गलाघोंट प्रतिस्पर्धा ने विकास के अवशिष्ट के रूप में वातावरणीय प्रदूषण को जन्म दे दिया है। जो कि अब विकसित समाज का हिस्सा बन चुका है। कभी कभी प्रदूषण की मात्रा इतनी बढ़ जाती है कि जानवरों, पेड पौधों की ही नहीं बल्कि स्वंय इंसान का जीवन भी खतरे में पड़ जाता है। हमारे देश की राजधानी नई दिल्ली विश्व के अधिकतम् प्रदूषित शहरों में शामिल हो चुकी है। हिमालय से उत्पन्न, हमारे देश की पवित्र मानी जाने वाली गंगा नदी भी प्रदूषण के कारण अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही है। मैली व प्रदूषित गंगा का पुनः जीवीकरण (पुनः स्वच्छीकरण) आज यक्ष प्रश्न के रूप मे हमारे समक्ष विद्यमान है। गंगा के तटीय क्षेत्रों में उत्पन्न घरेलू व औद्योगिक कचरे एवं गंदगी का गंगा में विसर्जन के कारण गंगा नदी प्रदूषित हो चुकी है। एक समय था जब गंगा अपने उद्गम स्थल गौमुख से लेकर गंगासागर तक तटीय क्षेत्रों की सफाई अनवरत रूप से करती थी किन्तु आज वातावरणीय एवं जल प्रदूषण के कारण स्वयं संकट ग्रस्त है (चित्र 2)।

गंगा जल प्रदूषित होने के कारण सिंचित भूमि अपने आप ही प्रदूषित हो रही है तथा उस भूमि पर उगने वाली साग–सब्जियां व अन्य फसलों में विषैले पदार्थ–सीधे भोजन श्रृखंला द्वारा मानव शरीर में प्रविष्ट कर बीमारियां उत्पन्न कर रहे हैं। अर्थात जल, थल, एवं नभ (वातावरण) सभी क्षेत्रों के प्रदूषित होने के बाद इंसान निवास कहाँ करेगा एवं कैसे करेगा? यह एक विचारणीय किन्तु गम्भीर

चित्र 2: गंगोत्री घटी का मनोरम झांकी।

प्रश्न है। गंगा के उद्‌गम क्षेत्र हिमालय में भी प्रदूषण, विशेषकर वातावरणीय प्रदूषण अपनी जड़ें जमा चुका है। हिमालय की प्रमुख नदियों, जैसे गंगा, यमुना के उच्च जलग्रहण क्षेत्रों एवं घाटियों में भी घातक कार्बन नामक वातावरणीय प्रदूषण पाया गया है।

कार्बन प्रदुषण के स्रोत : वातावरण में पाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के प्रदूषण ठोस, गैस, द्रव व प्लाज्मा आदि अवस्थाओं में पाये जाते हैं। कार्बन नामक प्रदूषण सूक्ष्मदर्शीय कणों के रूप में पाया जाता है। यह दो प्रकार के कार्बन (अ) तत्व कार्बन तथा (ब) कार्बनिक कार्बन से मिल कर बना होता है। वैज्ञानिक जगत में काला कार्बन ऐरोसॉल के रूप में जाना जाता है। तत्व कार्बन पेड – पौधों व जीव जन्तुओं से निर्मित जीवाश्म इंधन जैसे पेट्रोल ड़ीजल एवं मिट्‌टी तेल के वाहनों एवं संयत्रो में अपूर्ण जलने से बनता है। जबकि कार्बनिक कार्बन, बायोमास जैसे लकड़ी, घास, खरपतवार आदि के अधूरे जलने से निर्मित होता है। अर्थात सड़कों पर अनवरत रूप से दौडते लाखों वाहन, जीवाश्म इंधन से चलने वाले संयत्र, जैव इंधन जैसे लकड़ी उपले, कोयला, आदि का खाना बनाने में उपयोग कर उर्जा प्राप्त करने वाली जनसंख्या एवं जंगल आग आदि ब्लैक कार्बन के सीधे– सीधे प्रमुखः स्रोत हैं। एक सर्वेक्षण के अनुसार 20% काला कार्बन जैव इंधन से, 20% जीवाश्म इंधन से तथा 40% खुले में जैव इंधन के जलाने से उत्पन्न होता है। हिमालय में वनाग्नि भी कार्बनिक कार्बन के उत्सर्जन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है विशेषकर वर्ष 2016 की गर्मियों में नमी की कमी के कारण जंगलों का महत्वपूर्ण हिस्सा आग की भेंट चढ़ा है जिससे अनियमित मात्रा में अत्यधिक कार्बनिक कार्बन उत्पन्न हुआ था। उक्त काला कार्बन उत्सर्जन वाले क्षेत्र से सीधे वातावरण में प्रविष्ट करता है और फिर हवा के साथ– साथ एक स्थान से दूसरे स्थान तक सरलता से पहुँच जाता है।

हिमालय क्षेत्रो में काले कार्बन का मापन : यद्यपि विश्व व भारत के विभिन्न क्षेत्रों में काले कार्बन के मापन हेतु संयत्र लगाये गये हैं। किन्तु हिमालय क्षेत्रों में दुरूह एंव विषम भौगोलिक परिस्थतियों के कारण यह प्रयास अभी अपनी शैशव अवस्था में है। वाडिया संस्थान द्वारा उच्च शिखरीय क्षेत्रों जैसे डोकरानी एवं गंगोत्री ग्लेशियर की घाटियों मे काले कार्बन मापक यंत्र स्थापित किये हैं। (चित्र 3) यद्यपि अनुपातिक रूप से उच्च शिखरीय हिमालय की घाटियाँ जैसे डोकरियानी ग्लेशियर घाटी, केदारनाथ घाटी (चित्र 4) तथा गंगोत्री घाटी (चित्र 5) आदि मनोहरी एवं प्रदूषण रहित रहती हैं जिससे कई किलोमीटर दूर तक भी साफ–साफ देखा जा सकता है। किन्तु आर्थिक सम्पन्नता आने के पश्चात सामाजिक रहन – सहन के स्तर मे बढ़ोतरी के कारण अब पर्यटक, यात्री, पर्वतारोही, रोमांचकारी व विकास कार्यों में शामिल लोग, अपने कार्य कलापों से अनजाने मे काला कार्बन प्रदूषण फैला रहे हैं। हालांकि ग्लेशियर के निकट पर्यटनकाल के दौरान काले कार्बन की मात्रा 0.0 से 1311 नैनोग्राम प्रति घनमीटर पाई गई है जो कि भारतीय हवा की मानक गुणवत्ता 60 माइक्रोग्राम प्रति घन मीटर तथा अन्तर्राष्ट्रीय मानक 25 माइक्रोग्राम प्रति घनमीटर से काफी कम है। किन्तु यदि समय रहते सही कदम नहीं उठाये गये तो स्थानीय एवं क्षेत्रीय स्तर पर प्राकृतिक संसाधनो जैसे ग्लेशियरों, नदियों,

चित्र 3: उच्च हिमालय में कार्बन मापक यन्त्र।

चित्र 4: केदारघाटी २०१३ आपदा से पूर्व।

चित्र 5: उच्च हिमालय पारिस्थितिकी तंत्ररू जंगल व वर्फ।

जंगलों तथा पूरे पारिस्थतीय तंत्र पर विपरीत प्रभाव और अधिक गति से पड़ेगा।

काले कार्बन का प्रभाव : काले कार्बन की प्रभावी क्षमता कार्बन के कणों के आकार व उनकी सघनता पर निर्भर करती है। वातावरण को गर्म करने की क्षमता काले कार्बन की कार्बन डाइआक्साइड से कई गुना ज्याादा है।

विश्व भर में किये गये शोध एवं अनुभव कार्यों से स्पष्ट है कि काले कार्बन से, वायुमण्डल पर ही नहीं बल्कि संसाधनों, फसल उत्पादन, जलवायु के साथ–साथ मानवीय स्वास्थ्य पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है। जल–वायु पर काला कार्बन सीधे तथा परोक्ष रूप में प्रभाव डालता है। काले कार्बन के कण सूर्य की उर्जा को सोख कर वातावरण को और अधिक गर्म बना देते हैं जो कि स्थानीय पेड़–पौधों एवं जीव जन्तुओं हेतु हानिकारक होता है एवं उनके प्राकृतिक आवास–निवास एवं पारिस्थतीय तंत्र में भी बदलाव आ जाता है। काले कार्बन के कण बर्फ से मिलने के कारण बर्फ की परावर्तक क्षमता कम कर देते हैं जिससे हिमालयी ढ़लानों पर बर्फ या तो जमती नहीं है और अगर जमी हुई है तो तापमान वृद्धि के कारण समय से पूर्व पिघल जाती है। इसी प्रकार यह प्रभाव ग्लेशियरों पर भी देखा गया है। इस प्रकार काला कार्बन जलवायु परिवर्तन में स्थानीय स्तर से लेकर वैश्विक स्तर तक निर्णायक भूमिका निभाता है। वैज्ञानिक स्तर पर परीक्षण से साबित हुआ है कि ग्लोबल वार्मिंग एवं जलवायु परिवर्तन जैसी अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं मे काले कार्बन एवं अन्य घटकों जैसे कार्बन डाइ आक्साइड, मीथेन, नाइट्रस आक्साइड आदि की महत्वपूर्ण भूमिका है।

नियंत्रण एंव न्यूनीकरण : भारत देश ही नही बल्कि विश्व के विकसित देशों में भी काले कार्बन की समस्या उग्र रूप धारण कर चुकी है एवं दुर्भाग्यवशः एक देश द्वारा उत्सर्जित काला कार्बन हवा के साथ आसानी से दूसरे देशों तथा आर्कटिक, अन्टार्कटिक व समुद्र में भी पहुंच जाता है। जिससे समस्या वैश्विक स्तर का रूप घारण कर लेती है। विश्व के जलवायु परिवर्तन पर नजर रखने हेतु गठित संस्था आई. पी. सी. सी एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों द्वारा भी काले कार्बन व अन्य प्रदूषण उत्सर्जित करने वाले देशों पर उत्सर्जन कम करने हेतु दबाव बनाया जा रहा है। किन्तु उत्सर्जन सीधे सीधे विकास एवं समृद्धि से जुड़े होने के कारण, वांछित सफलता प्राप्त नही हो पा रही है।

सम्पूर्ण विश्व के काले कार्बन का उत्सर्जन करने वाले उर्जा के स्रोतों का विकल्प ढूंढ़ा जा रहा है, उर्जा के गैर पारम्परिक स्रोत जैसे पवन उर्जा, सौर उर्जा, नाभिकीय उर्जा, सी.एन.जी., जल उर्जा आदि को विश्व के अधिकांश देशों के साथ भारत में भी प्राथमिकता दी जा रही है, खास कर हिमालयी क्षेत्रों मे पारम्परिक रूप से उपयोग में आने वाले जैव इंधन जैसे लकड़ी आदि के विकल्पों का प्रयोग किया जा रहा है। जो काफी हद तक सफल भी हो रहा है।

काले कार्बन एवं अन्य गैसों द्वारा पृथ्वी के बढ़ते तापमान व जलवायु परिवर्तन के सम्बन्ध में इसी वर्ष पेरिस में आयोजित संयुक्त राष्ट्र जलवायु सम्मेलन में हुये समझौते को ऐतिहासिक बताया जा रहा है जिसको 196 देशों ने स्वीकारा है। इसके अनुसार प्रत्येक देश उत्सर्जित गैसों में कुछ कटौती करेगा। किन्तु यह समझौता भारत, चीन जैसे विकासशील देशों के अनुरूप प्रतीत नहीं होता,

चित्र 6: तपोवनः ऋषि–मुनियों का तपस्थल।

क्योंकि ये देश बढ़ते हुये औद्योगिकीकरण के कारण कार्बन गैसों के उत्पादक हैं जो कि गरीब जनसंख्या के भरण पोषण हेतु अति आवश्यक है।

काला कार्बन एवं हिमालयन ग्लेशियर : राष्ट्रीय स्तर पर बनाये गये मॉडलों एवं हवा की दशा व दिशा पर ज्ञात परीक्षण से प्रतीत हो रहा है कि मध्य भारत तथा गंगा के मैंदानों में उत्सर्जित काला कार्बन, हवा के दबाव व तापमान मे अन्तर होने के कारण सीधे तिब्बती पठार व हिमालय की तलहटी में इक्ठठ्ा हो रहा है जिसको कई बार एशियन ब्राउन ऐरोसोल के नाम से भी इंगित किया गया है। हिमालय के ग्लेशियरों के तेजी से पिघलने का एक कारण यह भी माना जा रहा है। किन्तु काले कार्बन की जीवन अवधि कुछ दिनों से लेकर कुछ हफ्तों तक होने के कारण उसका बहुत अधिक संग्रह नहीं पाया जाता है। जबकि कार्बन डाइ आक्साइड की वातावरणीय जीवन अवधि 100 वर्ष से अधिक है। ऐसा माना जाता है कि मिट्टी में पाया गया कार्बन 30% तक काले कार्बन से प्राप्त होता है जो कि मिट्टी की उर्वरक क्षमता को बढ़ा देता है।

काला कार्बन एवं स्वास्थ्य : विभिन्न प्रकार के संसाधनों व वातावरण को सीधे एवं परोक्ष रूप में प्रभावित करने के साथ काला कार्बन स्वास्थ्य के लिये भी हानिकारक सिद्ध हुआ है। काले कार्बन के महीन कण कैंसर उत्पन्न करने की क्षमता रखते हैं। यूरोपीय देशों में इसे खतरनाक वायु प्रदूषण की श्रेणी में रखा गया है। एक अनुमान के अनुसार विश्व में लगभग 640,000 से 4,900,000 इंसानो की समय से पूर्व होने वाली मृत्यु को काले कार्बन को नियंत्रित करके रोका जा सकता है। छोटे बच्चों के श्वसन तंत्र पर भी काले कार्बन के विपरीत परिणाम देखे गये हैं।

एक अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि सन् 2030 तक अमेरिका के वातावरण मे विद्यमान काले कार्बन व अन्य कणिका पदार्थ से होने वाला नुकसान 2.9 लाख से लेकर 12 लाख डालर तक पहुंच जायेगा।

उत्तराखंड की प्राकृतिक आपदाएँ (एक वैज्ञानिक दृष्टि कोण)

मनीष मेहता, अनिल कुमार गुप्ता, प्रदीप श्रीवास्तव और डी.पी. डोभाल
वा.हि.भूवि.संस्थान, देहरादून

हिमालय विश्व की सबसे ऊँची पर्वत श्रृंखला है, जो पूर्व से लगभग 2400 किमी पश्चिम की ओर 'नामचा बरुवा' से नागा पर्वत के बीच स्थित है। इसकी चौड़ाई लगभग 230–320 किमी तक है इसकी उत्तरी सीमा पूर्व में ब्रह्मपुत्र एवं पश्चिम में सिंधु नदी तक है और दक्षिण की सीमा मेन फ्रंटल थ्रस्ट तक है जो इसको गंगा के मैदान से अलग करती है (ठाकुर और रावत 1992; वल्दिया 1980; यीन 2006)।

हिमालय विश्व में सबसे नूतन एवं नवीन पर्वत श्रंखला है, जिसका निर्माण लगभग साढ़े पांच करोड़ वर्ष पहले आरम्भ हो गया था जब भारतीय उपमहाद्वीप यूरेशिया महाद्वीप की ओर खिसकने लगा था और लगभग पांच करोड़ वर्ष पहले यह यूरेशिया महाद्वीप से टकराया था। तब से आज तक हिमालय के बनने की प्रक्रिया निरंतर चल रही है (देवेय और बर्ड 1970; वल्दिया 1980; यीन 2006)। नवीन एवं नूतन पर्वत श्रृंखला होने के कारण हिमालय को समय– समय पर प्राकृतिक आपदाओं का सामना करना पड़ता है, जिसके परिणाम स्वरुप पर्यावरण की लगातार क्षति होती रही है। हमें यह अच्छी तरह से ज्ञात है कि हिमालय का पारिस्थितिकी तंत्र बहुत गंभीर एवं संवेदनशील है, जो कि भारतीय उप महाद्वीप के तिब्बत के पठार के नीचे जाने से होने वाली विवर्तनिक एवं नूतन विवर्तनिक गतिविधियों से उत्पन हुआ है। पारिस्थतिकी तंत्र के क्षय होने से हिमालय की जीवन प्रणाली व पर्यावरण को बहुत क्षति हुई है। इसके अलावा जलवायु परिवर्तन के कारण जो ग्लोबल वार्मिंग हुई है उससे भी हिमालय के पारिस्थतिकी तंत्र को बहुत हानि हो रही है जैसे हिमनदों के पीछे खिसकने की दर में बढ़ोतरी, वर्षा में अनियमितता आयी है और आपदा में विगत एक दशक से बढ़ोतरी हुई है।

हिमालय के विस्तृत विस्तार एवं विविधता के कारण अत्यधिक वर्षा, बादल फटना, भूकम्प, बाढ़, हिमनद द्वारा बनी झील का टूटना, हिमस्खलन जैसी अनेक आपदाओं से विकास की गतिविधियों का रूकना सामान्य बात हो गयी है, जिसके कारण हर वर्ष सैकड़ों लोगों की जाने चली जाती हैं एवं हजारो करोड़ रुपये की आर्थिक संपत्ति की हानि होती है (तालिका 1)।

हिमालय का भौगोलिक वितरण एवं जलवायु

भौगोलिक दृष्टि से हिमालय को तीन भागों में विभाजित किया गया है जिसमे नीचे वाले भाग को पाद हिमालय, मध्य भाग को निम्न हिमालय और सबसे ऊपरी भाग को उच्च हिमालय कहते हैं। पाद हिमालय का निर्माण लगभग 2 करोड़ से 20 लाख वर्ष पूर्व नदियों द्वारा लाये गए निक्षेपों के जमाव के कारण हुआ है, इसमें मुख्यतः अलग अलग प्रकार की अवसादी चट्टानों का बृहद विस्तार है। निम्न हिमालय में मुख्यतः कायांतरित अवसादी चट्टानें पायी जाती है जिनकी आयु लगभग 1.8 अरब वर्ष से 80 करोड़ वर्ष अनुमानित की गयी है। उच्च हिमालय में मुख्यतः उच्च ग्रेड की कायांतरित चट्टानें पायी जाती हैं जिनकी आयु लगभग 80 से 40 करोड़ वर्ष है (हैंम और गान्सर 1939; लेफोर्ट 1975; वल्दिया 1999)।

अति उच्च शिखर एवं बृहद विस्तार होने के कारण हिमालय की जलवायु भी विविधता पूर्ण है। हिमालय में मुख्यतः दो प्रकार की मौसम प्रणाली प्रभावी है। ग्रीष्म ऋतु में यहाँ पर मानसून हवाओं का प्रभाव अत्यधिक होता है जो वर्षा का मुख्य कारण है। ये हवाएं हिन्द महासागर से अपने साथ नमी ले कर उठती है और भारतीय उपमहाद्वीप में वर्षा करती हैं। हिमालय के उच्च शिखर इन हवाओं को आगे बढ़ने से रोकते हैं जिससे ये उच्च शिखरों पर टकरा कर क्षीण हो जाती हैं या वापस लौटने लगती हैं और ये अपनी अधिकतम नमी वहीं छोड़ देती हैं जो आपदा का कारण बनती है। शीतकाल में समुद्र, भूमि के मुकाबले अधिक गरम होने के कारण हवा अपनी दिशा बदल देती है और भू से समुद्र की ओर बहने लगती है। इस अवधि में पश्चिमी विक्षोभ की हवाएं प्रभावी हो जाती हैं। ये हवाएं मेडिटेरियन, कास्पियन और ब्लैक समुद्र से नमी ले कर उपमहाद्वीप में वर्षा करवाती हैं और हिमपात के लिए भी उत्तरदायी होती हैं (ओवेन 1996, मेहता और अन्य 2014)।

तालिका 1: उत्तराखंड क्षेत्र में घटित कुछ महत्वपूर्ण आपदाएं।

अवधि	जिला	स्थान	घटनायें	क्षतियाँ
1868	चमोली	बिरही	भूस्खलन	73 लोग मरे
19 सितम्बर 1880	नैनीताल	नैनीताल	रॉकफॉल	151 लोग मरे
25 अगस्त 1894	चमोली	बिरही	झील का टूटना	संपत्ति की क्षति
7 अगस्त 1898	नैनीताल	कैलाखन	भूस्खलन	29 लोग मरे
1924	नैनीताल	वीरभट्टी	रॉकफॉल	संपत्ति की क्षति
1935	पिथौरागढ़	तवाघाट	भूस्खलन	संपत्ति की क्षति
1937	पिथौरागढ़	गर्ब्यांग	भू–धंसाव	संपत्ति की क्षति
1951	पौड़ी	सतपुली	बाढ़	50 लोग मरे
20 जुलाई 1970	चमोली	पाताल गंगा	बादल फटना	70 लोग मरे
19 जुलाई 1970	पिथौरागढ़	स्याना	बाढ़	12 लोग मरे
1976	बागेश्वर	कपकोट	भूस्खलन	16 लोग मरे
14 अगस्त 1977	पिथौरागढ़	तवाघाट	बाढ़, भूस्खलन	44 लोग मरे
1978	उत्तरकाशी	गंगनानी	झील का टूटना	25 लोग मरे
1979	चमोली	कौंथा गाँव	भूस्खलन	50 लोग मरे
23 जून 1980	उत्तरकाशी	ज्ञानसु	भूस्खलन	45 लोग मरे
9 सितम्बर 1980	उत्तरकाशी	कानोडिया गाँव	भूस्खलन	15 लोग मरे
1983	बागेश्वर	कर्मी गाँव	बाढ़	37 लोग मरे
1984	बागेश्वर	जगथना (कपकोट)	बाढ़, भूस्खलन	9 लोग मरे
1990	टेहरी	ऋषिकेश (नीलकंठ)	भूस्खलन	100 लोग मरे
16 अगस्त 1991	चमोली	देवर खण्डेरा, पीपल हॉट, गोपेश्वर	बादल फटना	29 लोग मरे
जुलाई 1996	पिथौरागढ़	रैतोली गाँव	बादल फटना	19 लोग मरे
11 अगस्त 1998	चमोली	उखीमठ	भूस्खलन	69 लोग मरे
17–18 अगस्त 1998	पिथौरागढ़	मालपा	भूस्खलन	261 लोग मरे
17 अगस्त 2001	चमोली	फाटा	बादल फटना	21 लोग मरे
10 अगस्त 2002	चमोली	बूढाकेदार	भूस्खलन	16 लोग मरे
23 जून 2005	चमोली	गोविंदघाट	बादल फटना	11 लोग मरे
12 जुलाई 2007	चमोली	गैरसैंण (पथरकटा)	बादल फटना	8 लोग मरे
6 सितम्बर 2007	पिथौरागढ़	धारचूला (बरम गाँव)	भूस्खलन	15 लोग मरे
8 अगस्त 2009	पिथौरागढ़	मुनस्यारी	बादल फटना	43 लोग मरे
12–13 अगस्त 2010	उत्तरकाशी	भटवारी	भू–धंसाव	संपत्ति की क्षति
18 सितम्बर 2010	अल्मोड़ा	अल्मोड़ा	बादल फटना	36 लोग मरे
3 अगस्त 2012	उत्तरकाशी	असीगंगा	बादल फटना	35 लोग मरे
13 सितम्बर 2012,	रुद्रप्रयाग	उखीमठ	बादल फटना	66 लोग मरे
16, 17 जून 2013	चमोली, रुद्रप्रयाग, उत्तरकाशी	गोविंदघाट,भ्यूंडार केदारनाथ, रामबाड़ा गंगोरी, भटवारी	भारी वर्षा, भूस्खलन, बाढ़	5000 लोग मरे

चित्र 1: हिमस्खलन द्वारा हुऐ आर्थिक हानि लेह–मनाली रोड (फोटो– एस0ए0एस0ई0 मनाली)।

हिमालय के अति उच्च शिखर एवं वृहद विस्तार होने और दो मौसम प्रणाली के आधार पर जलवायु वितरण विविधता लिए है। पूर्वी भाग में जहाँ ग्रीष्म मानसून का प्रभाव अधिक होता है और गर्मियों में अधिक वर्षा होती है वहीं पश्चिमी भाग में पश्चिमी विक्षोभ का प्रभाव अधिक होता है और जाड़ों में अधिक वर्षा होती है। जबकि मध्य क्षेत्र में ग्रीष्म मानसून और पश्चिमी विक्षोभ का प्रभाव लगभग बराबर होता है (ओवेन 1996, मेहता और अन्य 2014)।

प्राकृतिक आपदाएं

हिमालय सदैव ही अनन्त काल से भयावह प्राकृतिक घटनाओं जैसे हिमस्खलन, अत्यधिक हिमपात, बाढ़, बादल फटना, प्राकृतिक झीलों का टूटना, भूस्खलन, भूकम्प, आदि से भेद्य रहा है। इन घटनाओं में बाढ़, बादल फटना और भूस्खलन की घटनायें सामान्य हैं, जिनके द्वारा हर वर्ष अपार धन और जन की हानि होती है। इनमें से कुछ घटनाओं का विवरण निम्नलिखित है।

हिमस्खलन

बर्फ और हिमस्खलन विश्व के पर्वतीय क्षेत्रों में एक सामान्य सी घटना है। ध्रुवीय क्षेत्रों के बाद हिमालय दुनिया का सबसे बड़ा हिम क्षेत्र है इसका लगभग 10% भाग हिम और हिमनद से स्थायी रूप से ढका रहता है, जबकि जाड़ों में ये बढ़ कर 30% हो जाता है (रैना और श्रीवास्तव 2008)। जो इस क्षेत्र को हिमस्खलन के रूप में आपदा की ओर उन्मुख करता है।

पर्वतीय क्षेत्रों में मानवों की बढ़ती गतिविधियों जैसे पर्वतारोहण, पर्यटन, तीर्थयात्रा एवं क्षेत्र के निवासियों की बढ़ती जनसंख्या आदि के कारण हिमस्खलन के जोखिमों में वृद्धि हुई है।

भारत के पर्वतीय क्षेत्रों में हर वर्ष लगभग 100 से अधिक मौतें हिमस्खलन द्वारा होती हैं और सर्दियों के समय अधिकतम नुकसान जैसे सड़क का टूटना, पुल का टूटना, ऊचाई पर स्थित सैन्य कैंप आदि का ध्वंस होना होता है। हिमालय के पश्चिमी भाग में हिमस्खलन से सबसे अधिक हानि होती है जिनमें जम्मू और कश्मीर, हिमाचल और उत्तराखंड राज्य हैं, जहाँ जनसँख्या अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रों में भी वास करती है।

हिमनद के कारण

हिमालय में लगभग दस हजार हिमनद है जिनका क्षेत्रफल 0.5 से 148 किमी^{2} के बीच है और लगभग 37000 किमी^{2} भाग को ढके हुए है (रैना और श्रीवास्तव 2008)। धरती पर हिमनद सबसे विशाल स्वच्छ जल का स्रोत हैं। मौसम परिवर्तन से होने वाले ग्लोबल वार्मिंग की वजह से हिमालय के लगभग सभी हिमनद बड़ी तेजी से पीछे की ओर सिकुड़ रहे हैं। हिमनदों का सिकुड़ना और कम होना भविष्य में आने वाली बड़ी आपदा की ओर संकेत कर रहे हैं क्योंकि विश्व की सात बडी नदियों (तीन भारतीय नदी गंगा, ब्रह्मपुत्र और सिंधु) का उद्गम इन्हीं से है जो लगभग संसार की एक तिहाई जनसँख्या को भोजन व पानी प्रदान करती है।

हिमालय के हिमनदों के पीछे हटने की दर लगभग 5 से 20 मी/वर्ष है और द्रव्यमान संतुलन की दर ऋणात्मक अथार्त हिमनद का द्रव्यमान कम होने की प्रक्रिया लिटिल आइस ऐज (लगभग 1450 से 1850 ईस्वी तक) से लगातार चल रही है (कैंप और अन्य 2007; ब्लोच और अन्य 2012)। बीसवीं सदी के बाद यह प्रक्रिया और तेजी से बढ़ी है, जिससे यह अनुमान लगाया जाता है कि मानव के विकास के साथ ही वैश्विक तापमान भी बढ़ रहा है। लगातार बढ़ते तापमान से हिमनदों के पिघलने की गति के बढ़ने के कारण हिमनद द्वारा उत्पन खतरों ने आपदा का रूप लेना आरम्भ कर दिया है। हिमनद के पिघलने की घटना के कारण विभिन्न प्रकार की झीलों का निर्माण होता है ये झील हिमनद के ऊपर, हिमनद के दोनों किनारों, हिमनद के सामने और परिधि में निर्मित होती है। इन झीलों के आकार में और संख्या में वर्ष दर वर्ष वृद्धि हो रही है जिसके कारण भविष्य में होने वाले संकटो में वृद्धि होने की संभावना है। इन झीलों के फटने के कारण नदियों के अनुप्रवाह में बाढ़ के कारण अत्यधिक क्षति होती है, जैसे हिमाचल प्रदेश में परचु झील के फटने और उत्तराखंड में चोराबाड़ी झील के फटने के कारण हुई वीभत्स त्रासदी।

बाढ़

उच्च शिखरीय हिमालय क्षेत्रों में अत्यधिक वर्षा एवं बाढ़ जैसी आपदा का प्रतिकूल प्रभाव सामान्य सी बात है जो कि सामान्य जन मानस के मस्तिष्क पटल पर अंकित होना चाहिए। इस तरह की आपदा का मुख्य उदाहरण जून 2013 को श्री केदारनाथ क्षेत्र में भीषण प्रलयकारी घटना है जिसके कारण 5000 से ज्यादा लोगों को अपनी जान गँवानी पड़ी एवं हजारो लोग लापता हो गए। इस घटना के कई प्राकृतिक कारण हैं पर मानवों का प्रकृति नियमों से अनभिज्ञ होना एवं उससे छेड़ छाड़ करने के कारण इस घटना ने एक वीभत्स आपदा का रूप धारण किया। उच्च हिमालय क्षेत्रों में सामान्यतः बादल फटना, हिमनद द्वारा निर्मित झील का टूटना, भूस्खलन द्वारा निर्मित झील का टूटना ही बाढ़ का मुख्य कारण है। इस के लिए भू आकृति और इस के खतरों को समझना आवश्यक है।

संभावित खतरों वाले क्षेत्र

स्थलाकृतिक अग्रांत

हिमालय में वर्षा के वितरण की प्रवृति सामान्यतः एक जैसी नहीं है। वर्षा की प्रवृत्ति पश्चिम से पूर्व और दक्षिण से उत्तर की ओर बढ़ती जाती है, जिस के लिए स्थलाकृति दिक–सूचक का काम करती है। ट्रॉपिकल रेनफॉल मेज़रमेंट मिशन नासा का डेटा द्वारा हिमालय के वर्षा का वितरण सरलता पूर्वक समझा जा सकता है। उदाहरण के लिए चित्र 3 में अलकनंदा नदी का पार्श्व चित्र उ०द० की ओर की भू–आकृति को दर्शाता है, जो दो प्रमुख स्थलाकृति 1–दक्षिण में हिमालय का फ्रंटल थ्रस्ट, यह हिमालय के शिवालिक क्षेत्र को गंगा के मैदान से अलग करता है। 2–मेन सेंट्रल थ्रस्ट जहाँ उच्च हिमालय की चट्टानें निम्न हिमालय की चट्टानों के ऊपर है। यह दो क्षेत्र अपनी स्थलाकृति के कारण सर्वाधिक वर्षा ग्रहण करते है।

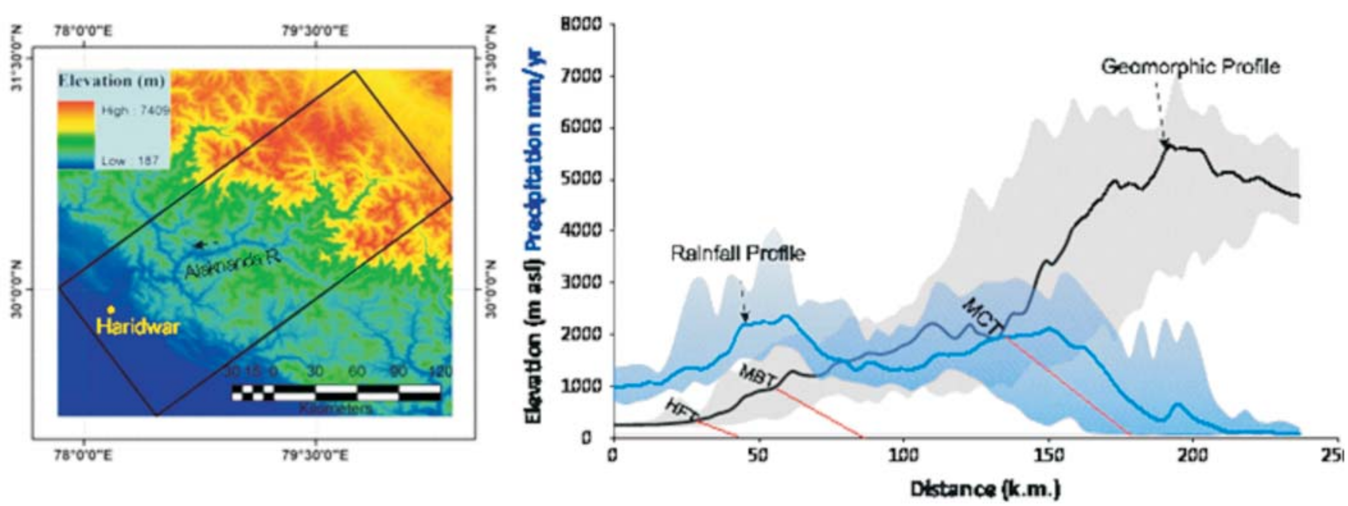

चित्र 3: गंगा नदी घाटी का डिजिटल एलिवेशन मॉडल अलकनंदा नदी दिखा रहा है। आयत के अंदर दिखाए गए क्षेत्र को भू–आकृतिक और वर्षा प्रोफाइल तैयार करने के लिए प्रयोग में लाया गया है।

ग्रीष्म ऋतु में जून से सितम्बर के महीनों में जब मानसून चरम पर होता है तो ये स्थलाकृतिक अग्रांत, प्राकृतिक कारणों से अत्यधिक वर्षा में भेद्य और कमजोर हो जाती हैं। भौगोलिक सूचना प्रणाली द्वारा भू–दृश्यों व बाढ़ भेद्य सुझावों पर किये गए अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि इन्हीं क्षेत्रों में खुले कृषि क्षेत्रों से तलछट निर्वहन, बंजर बाढ़ के मैदान, पुराने व सक्रिय भूस्खलन, वनों की कटाई आदि बाढ़ सम्बन्धी तत्वों को बढ़ावा देते हैं (रावत और अन्य 2012)।

हिमनद और उसके चारों ओर का क्षेत्र

हिमालयन क्षेत्रों में किये गये अध्ययन यह दर्शाते हैं कि, ऊपरी गंगा घाटी में पिछले 60–70 हजार वर्षों के दौरान दो चरणों में हिमनदों का विकास हुआ हैं। ये चरण लास्ट ग्लेसिअल मेक्सिमम लगभग 21 हजार वर्ष पहले और 63 हजार वर्ष पूर्व पेनल्टीमेट ग्लेसियेशन हैं। अध्ययनों से ये भी ज्ञात हुआ है कि पेनल्टीमेट ग्लेसियेशन में हिमनदों का अग्र भाग समुद्र तल से लगभग 2600 मी पर था जो आज पीछे खिसक कर लगभग 3800 मी पर पहुँच गया है। इन 60–70 हजार सालों में हिमनद ने अपना लगभग 5600 किमी^{2} क्षेत्र खाली किया है जो 8 किमी^{2}/ शताब्दी की दर से खाली हो रहा है (चित्र 4)।

हिमालय उच्च क्षेत्रों में वनस्पति न होने के कारण हिमनदों द्वारा निक्षेपित प्राकृतिक मलबों द्वारा निर्मित झील

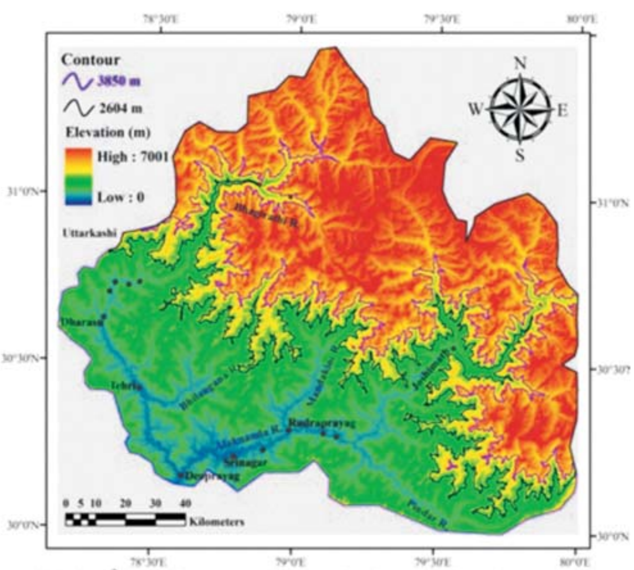

चित्र 4: 60–70 हजार सालो में हिमनद ने अपना लगभग 5600 किमी^{2} क्षेत्र खाली किया है।

और भूस्खलन क्षेत्र हैं। गंगा घाटी के निचले क्षेत्रों में किये गये अध्ययन ये दर्शाते हैं कि यहाँ पर निक्षेपित लगभग 90% मलबा या अवसाद हिमनदों के मोरैन से बह कर आये हैं। ये प्रक्रिया आद्र जलवायु के समय नदी के प्रवाह में हुई बढ़ोतरी के कारण हुई, जो जलवायु में होने वाले परिवर्तन का प्रमाण हैं। तापमान में वृद्धि होने के कारण हिमालय क्षेत्रों में अत्यधिक वर्षा होने लगती है जिससे हिमनद द्वारा निक्षेपित मलबा बह कर नदी को रोकता है और झील का निर्माण करता है जिससे वर्षा का और हिम द्वारा पिघला जल इसमें जमा होता हैं। जो बाद में रिस कर झील को तोड़ देता है और आपदा का वीभत्स रूप धारण कर लेता है।

हिमालय में बाढ़ के कारण

हिमनद द्वारा बनी झीलों के फटने से

भारी वर्षा एवं हिम के पिघलने की गति के बढ़ने से झीलों का आकार बढ़ने लगता है जिससे ये टूट जाती हैं और निचली घाटी में पानी व अवसादों का भारी मात्र में निर्वहन होता है जिस के द्वारा अत्यधिक नुकसान होता है। रिचर्डसन और रेनॉल्ड्स (2000) ने इस प्रकार की 33 झीलों का अध्ययन 1930 में किया, जिस में उन्होंने पाया कि इस प्रकार की घटना में लगातार वृद्धि हो रही है। हाल ही में वासन व अन्य (2013) द्वारा किये गए अध्ययनों से ज्ञात हुआ की गंगा नदी में पिछले 1000 सालो में लगभग 25 विशाल बाढ़े आई हैं। गंगा नदी के पुरा बाढ़ द्वारा जमा अवसादों के विश्लेषण से पता चला कि इसकी उत्पत्ति संभवतः उच्च हिमालय क्षेत्रों से हुई। इस प्रकार की घटना का उदाहरण केदारनाथ में आई भीषण आपदा है।

असामान्य वर्षा की घटनाए एवं भूस्खलन

सामान्यतः उत्तराखंड में लगभग 1000–2000 मिमी/वर्ष के बीच बरसात होती है, जो कि वर्षा छाया क्षेत्रों लद्दाख और कराकोरम (<100 मिमी/वर्ष) के अनुपात में बहुत ज्यादा है। हिमालय क्षेत्र में जब सामान्य से अधिक बरसात होती है तो पहाड़ी के ढलानों से मलबे का प्रवाह आरम्भ हो जाता है जो कि आपदा का मुख्य कारण है (फ्रोएहलीच और स्टॉर्केल 1987)। हिमालय में वर्षा कब आपदा का रूप ले लेगी इस का आकलन इस क्षेत्र में वर्षा के द्वारा पहाड़ी ढलानों से मलबा बहने की सीमा से किया जा सकता है। यह सीमा क्षेत्र के भौगोलिक एवं भूगर्भीय संरचना पर निर्भर

करती है। इसका आंकलन यह है कि यदि स्थानीय स्तर पर एक दिन में 200 मिमी या दो–तीन दिन में 300–400 मिमी वर्षा हुई तो मलबे का प्रवाह शुरु हो जायेगा और यदि क्षेत्रीय स्तर पर 300 मिमी. दिन से ज्यादा रहा और दो–तीन दिन में 500–600 मिमी वर्षा हुई तो मलबे का प्रवाह बढ़ जायेगा (स्टॉर्केल और बासु 2000)। उत्तराखंड राज्य के वर्षा के आकड़ों का अध्ययन ये दर्शाता है कि हर 100 वर्ष में अत्यधिक वर्षा (200–500 मिमी / दिन) एक बार अवश्य होती है। इस प्रकार की घटना 1880 में एक दिन में 820 मिमी वर्षा और सितम्बर 1924 में एक दिन में 770 मिमी वर्षा अभिलिखित है। इस प्रकार की अत्यधिक वर्षा और बादल फटने से भूस्खलन की घटनाएं बढ़ जातीं हैं। जून 2013 की घटना के कारण केवल भागीरथी नदी घाटी में हजार से ज्यादा भूस्खलन क्रियाशील हुए। भूस्खलन द्वारा नदी को रोक कर बांध / झील का निर्माण और इसका टूटना विनाश का कारण होता हैं। इसे भूस्खलन द्वारा बनी झील का टूटना कहते हैं।

सन 1893 में भूस्खलन द्वारा बिरही गंगा (अलकनंदा की सहायक नदी) भूस्खलन द्वारा रोक कर एक विशाल झील (लगभग 350 मी उँची) का निर्माण हुआ जिसे गोना ताल के नाम से जाना गया। कुछ सालों बाद इस भूस्खलन निर्मित झील का कुछ हिस्सा टूट गया जिसके कारण श्रीनगर शहर पूरा नष्ट हो गया, जिसका जल स्तर श्रीनगर पर लगभग 50 मी था। 20 जुलाई 1970 को लगभग 80 वर्ष बाद झील पूर्णतः नष्ट हो गयी और अलकनंदा में 911 मी^{3} / मिनट की दर से सिल्ट व पत्थरों का निर्वहन हुआ, जिससे श्रीनगर गढ़वाल पानी में पूरी तरह डूब गया और ऊपरी गंगा नहर का पानी लगभग 2 मी ऊपर उठ गया (अग्रवाल और चक 1991)। पुरा बाढ़ के निक्षेपों के अध्ययन से यह ज्ञात हुआ कि पिछले 1000 सालों में 50 से ज्यादा भूस्खलन द्वारा निर्मित झीलों के टूटने से भीषण बाढ़ आयी है (श्रीवास्तव और अन्य 2008; वासन और अन्य, 2013), अध्ययन ये भी दर्शाता है कि इस प्रकार की घटनाओं की पुनरावृति लगभग हर 40 वर्ष बाद हुई है।

केदारनाथ में प्राकृतिक आपदा

भारत के पहाड़ी क्षेत्रों में बरसात के मौसम में अक्सर बहुत अधिक हानि होती है। उत्तराखंड में तो भूस्खलन, बादल फटना, बाढ़ आदि सामान्य घटनाएं हैं। इस से प्रत्येक वर्ष जान माल का बहुत नुकसान होता है और यातायात पूर्णतः बंद हो जाता है। 16 और 17 जून 2013 को ये बरसात उत्तराखंड पर कहर बन कर टूटी जिसने लगभग 1 लाख से अधिक लोगों को प्रभावित किया 5000 से ज्यादा लोगों की जानें गयी और लगभग 30 अरब रुपये से ज्यादा मूल्य की सम्पति का नुकसान हुआ (डोभाल और अन्य 2013, दुबे और अन्य 2013; निरुपमा और अन्य 2014)। क्या उत्तराखंड में इस आपदा में वर्षा का ही ज्यादा योगदान रहा या कुछ और कारण भी हैं। इन सब को समझने के लिए पहले हमें मौसम के बारे में समझना होगा। हिमालय क्षेत्र की जलवायु मुख्यतः गर्मियों में मानसून और जाड़ों में पश्चिमी विक्षोभ पर निर्भर करती हैं। मानसून वो हवाएं होती हैं जो हिंद महासागर और अरबसागर के दक्षिण पश्चिम तट से चलती हैं। ये हवाएं अपने साथ पानी की बूंदों को उड़ा कर लाती हैं और भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश में भारी वर्षा करती हैं। मानसून जून से सितम्बर तक लगभग चार माह तक सक्रिय रहता है और अक्टूबर के बाद पश्चिमी विक्षोभ सक्रिय हो जाता हैं। सर्दियों के महीने में हिमालय क्षेत्र में बर्फ का पड़ना इस पर ही निर्भर करता है।

प्रायः यह देखने को आया है की हिमालय के उपरी क्षेत्र में मानसून हवाएं लगभग जून के अंत में या जुलाई के आरम्भ में ही पहुँचती हैं लेकिन इस वर्ष (2013) में ये हवाएं जून के बीच में ही हिमालय क्षेत्र में पहुँच गयीं और पश्चिमी विक्षोभ से टकरा गयीं, जिस से तीन दिन तक लगातार मूसलाधार वर्षा हुई। इस वर्षा के कारण जो बर्फ जून के अंत तक पिघलती थी वो दो दिन में ही पिघल गयी जिस से पानी की मात्रा सामान्य से कहीं अधिक बढ़ गयी और नदियों, तालाबो में जल भराव हो गया।

16 और 17 जून 2013 को केदारनाथ घाटी में भयंकर तबाही हुई जिसके दो मुख्य कारण समझ में आते हैं।

1) 16 जून 2013 को भारी वर्षा के कारण सरस्वती गंगा, मधु गंगा और दूध गंगा में बहुत पानी आया जो अपने साथ मिटटी, पत्थर और गाद लाया और उसने मन्दाकिनी नदी की घाटी को पाट दिया और पानी केदारनाथ शहर में बहने लगा जिसके कारण शंकाराचार्य समाधि, भारत सेवा आश्रम संघ, और श्री केदारनाथ मंदिर के ऊपर के सारे भवन नष्ट हो गए, इस बाढ़ के कारण रामबाड़ा भी पूरा ध्वस्त हो गया।

चित्र 5: केदारनाथ में भीषण बाढ़ के बाद के चित्र।

2) दूसरी घटना 17 जून 2013 को प्रातः घटी, 15 और 16 जून 2013 को भारी वर्षा के कारण, चोराबाड़ी ताल (गाँधी सरोवर) में लगातार जल भराव होता रहा जिस के कारण ताल का जल स्तर अपने किनारों के उपर आ गया, पानी के दबाव से ताल को सहारा देने वाले मौरेन की दीवार टूट गयी और हजारों लीटर पानी 10 मिनट में ही खाली हो गया और इस पानी ने पूरे केदारनाथ शहर को तहस नहस कर दिया, इसके प्रभाव से निचले स्तर में गौरीकुंड, सोनप्रयाग, कुंड, तिलवाडा, अगस्त्यमुनि और रुद्रप्रयाग में भीषण तबाही देखने को मिली।

निष्कर्ष

हिमालय विश्व में सबसे नूतन एवं उच्चतम पर्वत श्रंखला है। नवीन एवं उच्चतम पर्वत श्रंखला होने के कारण से हिमालय को समय– समय पर प्राकृतिक आपदाओं का सामना करना पड़ता है, जिसके परिणाम स्वरुप पर्यावरण की लगातार क्षति होती रही है। हमें यहाँ अच्छी तरह से ज्ञात है कि हिमालय का पारिस्थतिकी तंत्र बहुत जटिल हैं, जो कि भारतीय उप महाद्वीप के तिब्बत के पठार के नीचे जाने से होने वाली विवर्तनिक एवं नूतन विवर्तनिक गतिविधियों से उत्पन हुआ है। पारिस्थतिकी तंत्र के क्षय होने से हिमालय के जीवन प्रणाली व पर्यावरण को बहुत क्षति हुई है। इसके अलावा जलवायु परिवर्तन के कारण जो ग्लोबल वार्मिंग हुई है उससे भी हिमालय के पारिस्थतिकी तंत्र को बहुत हानि हो रही है जैसे हिमनदों के पीछे खिसकने की दर में बढ़ोतरी हुई, वर्षा में अनियमितता आयी है और आपदाओं में विगत एक दशक से बढ़ोतरी हुई है।

प्राकृतिक आपदाओं के कारण आने वाली बाढ़ की आवर्ती विगत दशकों में बढ़ी है। आपदा के क्षेत्रों में शिक्षा व तैयारी से हम आपदा से होने वाले नुकसान में कमी ला सकते हैं। बिना भू आकृति और उनकी क्रियाओ को समझे, विकास के कार्यों में निर्माण सम्बन्धी कार्यो को नहीं करना चाहिए अथवा उनमें रोक लगानी होगी। हमें अपनी सामाजिक जिम्मेदारी और सभ्यता को समझना होगा। हिमालय की नदियों में नदी प्रवाह माप और स्वचालित मौसम स्टेशनों के घने नेटवर्कों का विकास किया जाना चाहिए और इन्हें उपग्रह के माध्यम से जोड़ना चाहिए। नदी के निम्न स्तर के टैरेस पर निर्माण कार्यो की अनुमति नहीं देनी चाहिए। इन क्षेत्रों को कृषि के लिए प्रयोग में लाना चाहिए। अति संवदेनशील मलबे की ढलानों अर्थात स्क्री फैन पर भवनों का निर्माण पूर्णतः प्रतिबंधित करना चाहिए क्योंकि भवन निर्माण के कारण ढलान का कोण परिवर्तित किया जाता है। जो भूस्खलन को उत्प्रेरित करता है। ये सभी जानते हैं कि घने जंगलो में पत्तियों व शाखाओं के आवरण से ढलान की सुरक्षा और जड़ों द्वारा मिटटी को बांधने की क्षमता के कारण भूकटाव व भूक्षरण कम होता है, इस लिए वनीकरण कार्यक्रम से वनों व पौधों का अच्छा विकास करना चाहिए। सड़क का विकास नदियों के साथ परन्तु नदी से अधिक उचाई पर होना चाहिए और गाँव को जोड़ने के लिए ट्रंक रोड का निर्माण होना चाहिए। यात्रा सीजन के दौरान सभी आपातकालीन सुविधाओं के साथ कई हैलीपैड व मोबाइल अस्पतालों को विकसित करना चाहिए। भू–स्खलन एवम् उससे जुडी गतिविधियाँ हिमालयी क्षेत्र में आम हैं तथा यह इस क्षेत्र में रह रहे जनमाल के लिये गंभीर जोखिम हैं। इस जोखिम से निपटने के लिए न केवल भूस्खलन के पूर्वानुमान तथा पूर्व चेतावनी तंत्र हेतु अध्ययन की आवश्यकता है बल्कि एक सही आपदा प्रबंधन योजना के विकास की भी अत्यन्त आवश्यकता है। उत्तराखण्ड में अधिकांश आवासीय संरचनाओं की स्थिति जमीनी त्वरण को सहने की स्थिति में नही हैं। अतः इस क्षेत्र में भूकम्पीय जोखिमों के सटीक आँकलन की भी आवश्यकता है।

डोकरानी के शीर्ष पर

सीपिका सुन्दरियाल
वा.हि.भूवि.संस्थान, देहरादून

जीवन में कुछ क्षण ऐसे होते हैं जो हमें किसी विशेष उपलब्धि की अनुभूति कराते हैं। साथ ही और बड़ी उपलब्धियों को प्राप्त करने का प्रेरणा स्रोत बन जाते हैं। मेरे जीवन में वह क्षण तब आया जब मैने डोकरानी हिमनद की 5300 फुट की गगनचुंबी ऊँचाइयों पर अपने कदम रखे। एक ऐसी अद्वितीय उपलब्धि जिसे पूर्ण करने की आशा स्वयं मुझे भी न थी। परन्तु हमारे दल में एक व्यक्ति ऐसे भी थे जिन्होंने मेरा उत्साहवर्धन करके मुझे डोकरानी हिमनद की उस ऊँचाई पर पहुँचने वाली पहली लड़की बनाया। वह व्यक्ति और कोई नहीं बल्कि स्वयं मेरे मार्गदर्शक एवं मेरे पीएच०डी० गाइड डा० डी०पी० डोभाल थे जिन्होने मुझे सही परिदृश्य मे ग्लेशियोलॉजी का अर्थ भली भाँति बताया। डा० डोभाल का यह कथन कि ग्लेशियोलॉजी एक ऐसा कार्यक्षेत्र है जिसमें सामूहिक प्रयत्न द्वारा ही सफलता प्राप्त होती है, मेरे मस्तिष्क पटल पर आज भी अंकित है। इस वाक्य के भीतर छिपा सच एवं इसकी पुष्टि मैंने आज तक के अपने प्रत्येक क्षेत्र–दौरे में देखी है। अपने साथ सदैव एक कर्तव्यनिष्ठ एवं समय समय पर मेरा उत्साहवर्धन करने वाला दल पाकर मैं सदैव गौरवान्वित होने का अनुभव करती हूँ।

क्षेत्र दौरे में व्यक्ति, विभिन्न प्रकार के कार्यों से घिरा ही रहता है। इसी प्रकार एक क्षेत्र दौरे के दौरान, 13 अक्टूबर 2015 को रात्रि के समय सैपलिंग का दैनिक कार्य समाप्त करने के पश्चात् हम सब लोग अगले दिन पूर्ण किये जाने वाले कार्यों पर विचार कर रहे थे । इसी मध्य डा० डोभाल मेरे लिए एक अप्रत्याशित प्रस्ताव लेकर आये। यह प्रस्ताव था अगले दिन डोकरानी हिमनद पर 5300 फीट की ऊँचाई पर स्नो पिट करना। सारी रात इसी उधेड़बुन में कट गई की क्या मैं यह कर पाऊँगी? क्या मैं जा पाऊँगी? क्या मैं नीचे वापस आऊँगी? ऐसे कई विचार आये और इसी बीच कब सुबह हुई पता ही नहीं चला। सुबह 5 बजे पूरा दल चलने को तैयार था सबने आईस एक्स, कोफलाज, वाकिंग स्टिक आदि तैयार करके चलना प्रारम्भ किया। स्नाउट के किनारे से बोल्डर को पार करके ग्लेशियर के मलबे में चलते हुऐ ऐबलेसन जोन पार करते हुये सर ने बताया की हम लोग ई ल ऐ पार कर रहे हैं, जहॉ से ग्लेशियर दो भागों में बॅट जाता है। ग्लेशियर में चलना बेहद ही कठिन होता है खासकर जब दो दिन पहले ही ताजी बर्फ गिरी हो। उस पर चलना, फिर फिसलना, गिरना, उठना और क्रीवास को देखकर मन में भय बैठना कि अगर पैर फिसला तो बस यहीं इति श्री। साथ ही मै भगवान से यही प्रार्थना कर रही थी कि काम हो जाये और यहाँ तक आना सफल हो जाये। चलते चलते डोभाल सर की बातें कि क्या ये चढ़ पायेंगी? सुनकर उनकी वाणी में भय और गंभीरता दोनो का आभास हुआ। सत्य तो यह था कि मै भी भीतर ही भीतर भयभीत हो गई थी तथा मेरे मन मे इस कार्य को सिद्ध कर पाने के प्रति कई सवाल उठने लगे।

इस आरोहण के दौरान मेरी कई बार साँस टूटी, मुँह सूखा, प्यास लगी परन्तु सबके प्रेरणादायक शब्द मुझे हर बार हिम्मत तथा आगे बढ़ने का प्रोत्साहन देते थे। हर किसी की उम्मीद व एक अच्छी पर्वतारोहिणी बनने की अभिलाषा ने मुझे अंततोगत्वा उस ऊँचाई पर पहुँचा ही दिया। वहाँ पहुँचने के बाद ऐसा लग रहा था कि आज मै सॉतवे आसमान में पहुँच गई हूँ। उस दिन खुशी की कोई सीमा न थी। उस दिन सही मायनों मे पहाड़ की बेटी होने का गौरव प्राप्त हुआ। दिल में हमेशा कुछ अलग करने की तमन्ना और हमेशा इन पहाडों मे चढ़ने का सपना आज हकीकत मे बदलते हुऐ देखकर मेरी ऑखो में खुशी के ऑसू निकल आए। उस जगह पहुँचने के बाद सारी थकान छूमंतर हो गई और आगे बढ़ने का मन करने लगा। पीछे मुडकर देखा तो विश्वास ही नही हुआ की यहॉ तक आखिर पहुँच कैसे गये? आज फिर भय के आगे एक विश्वास की जीत हुई। किसी ने सच ही कहा हैं।

"बीच रास्ते से लौटने का कोई फायदा नही क्योंकि लौटने पर आपको उतनी ही दूरी तय करनी पडेगी, जितनी दूरी तय करने पर आप लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं।"

कार्य सफलतापूर्वक सिद्ध हो जाने की खुशी सभी की ऑंखो में साफ दिखाई दे रही थी। सबने इस उपलब्धि को

खूब खुशी से प्रदर्शित किया। तभी अचानक से मौसम खराब होने लगा तो सर के निर्देश के अनुसार सभी बेस कैंप की ओर प्रस्थान करने लगे। रास्ते में आते हुए एक जगह मिलकर सबने चाय बनाई और वापस कैंप मे पहुॅच गये। आते वक्त मन में बस एक बड़ी खुशी और आत्मविश्वास था तथा अपने गुरू के मार्गदर्शन से तथा अपने साथियों के प्रोत्साहन से, इस दुर्गम कार्य को पूर्ण कर पाने के लिए सबके प्रति धन्यवाद का भाव था। अंत में, मैं यह कहना चाहती हुँ कि इस दुनिया मे असंभव कुछ भी नहीं, हम वो सब कर सकते हैं, जो हम सोच सकते हैं और हम वो सब सोच सकते है जो आज तक हमने नही सोचा।

भू–चुम्बकत्व

गौतम रावत
वा.हि.भूवि.संस्थान, देहरादून

चुम्बकत्व पर जब भी चर्चा करने के लिये इस विषय को उठाते हैं तो स्कूली दिनों में चुम्बक के साथ किये गये प्रयोग याद आने लगते हैं। एक छोटी से छड़ चुम्बक व चुम्बकीय सूई की सहायता से चुम्बकीय बल रेखायें खींचकर यह स्थापित करना कि चुम्बकीय क्षेत्र की रेखाएं उत्तरी ध्रुव से बाहर और दक्षिणी ध्रुव पर प्रवेश करती हुई प्रतीत होती है परन्तु किसी भी स्थान पर मिलती नही हैं। छड चुम्बक के पास चुम्बकीय बल रेखायें पास–पास व छड चुम्बक से दूर जाने पर ये चुम्बकीय बल रेखायें दूर–दूर हो जाती हैं (चित्र 1)। इसी प्रकार चुम्बक और चुम्बकीय गुणों से सभी भलीं भाँति परिचित हैं। जैसे कि किसी छड़ चुम्बक को स्वतंत्रता पूर्वक लटकाने पर यह सदैव उत्तर–दक्षिण दिशा में ठहरता है। चुम्बक के समान ध्रुवों मे प्रतिकर्षण एवं असमान ध्रुवों में आकर्षण होता है। चुम्बक के एकल ध्रुव का अस्तित्व नहीं होता है (चित्र 1)।

जिस प्रकार छड़ चुम्बक के चारों ओर चुम्बकीय क्षेत्र होता है उसी प्रकार पृथ्वी के चारों ओर भी चुम्बकीय क्षेत्र होता है। यद्यपि पृथ्वी की चुम्बकीय क्षेत्र की तीव्रता अत्यन्त कम होती है। यह भू–चूम्बकीय क्षेत्र, उस छड़ चुम्बक के चुम्बकीय क्षेत्र के बराबर है जो पृथ्वी के केन्द्र से गुजरता है तथा पृथ्वी के घूर्णन अक्ष से वर्तमान में लगभग 10° पर झुका हुआ है। इस छड़ चुम्बक के सिरे धरती की सतह को जहाँ पर काटते हैं उन्हें चुम्बकीय ध्रुव कहते हैं। उत्तर की तरफ इंगित करने वाले को उत्तरी ध्रुव तथा दक्षिण की तरफ इंगित करने वाले दक्षिणी ध्रुव कहते हैं। चुम्बकीय ध्रुव एवम् भौगोलिक ध्रुव भिन्न–भिन्न होते हैं किसी स्थान पर कुल चुम्बकीय बल (F) एवं इसके घटक चित्र 2 के अनुसार प्रदर्शित किये जाते हैं। चुम्बकीय बल F के क्षैतिज घटक की दिशा भौगौलिक उत्तरी ध्रुव से जो कोण बनाती है उसे चुम्बकीय दिक्पात् कहते हैं। उसी तरह क्षैतिज तल से चुम्बकीय क्षेत्र की दिशा के मध्य के कोण की चुम्बकीय अवनति या मैग्नेटिक इनक्लिनेशन कहते हैं (चित्र 2)। पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र की तीव्रता लगभग 65000 nT होती है, यह क्षेत्र इतना कम है कि हमारे आस– पास दैनिक प्रयोग की वस्तुएं भी भू–चुम्बकीय क्षेत्र से ज्यादा तीव्रता का चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न करती हैं। तुलनात्मक अध्ययन के लिए सारिणी 1 को देखा जा सकता है।

दैनिक प्रयोग मे आने वाले इलेक्ट्रॅानिक उपकरण से उत्पन्न चुम्बकीय क्षेत्र उच्च आवृति वाले होते हैं। जैसे जैसे हम उपकरण से दूर जाते हैं तो इनकी तीव्रता कम होती जाती है। अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के अनुसार किसी भी दैनिक इलेक्ट्रिक व इलेक्ट्रानिक उपकरण से उत्पन्न चुम्बकीय क्षेत्र की तीव्रता उपकरण से 30 सेमी की दूरी पर 100 μT से ज्यादा नहीं होनी चाहिए।

जैसा कि हम जानते हैं पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र में (25000 nT से 65000 nT तक) भू–मध्य रेखा से ध्रुवों की तरफ बढ़ने से 25000 nT से 65000 nT तक बदलाव आता है। पृथ्वी के चारों और चुम्बकीय क्षेत्र की उपस्थिति का मुख्य कारण पृथ्वी के गर्भ मे ही निहित है। पृथ्वी के केन्द्र से बाहर की तरफ लगभग 3486 किमी. त्रिज्या का गोलीय भाग भू–क्रोड के नाम से जाना जाता है। जिसके प्रथम 1216 किमी त्रिज्या के गोलीय भाग को आंतरिक भू–क्रोड

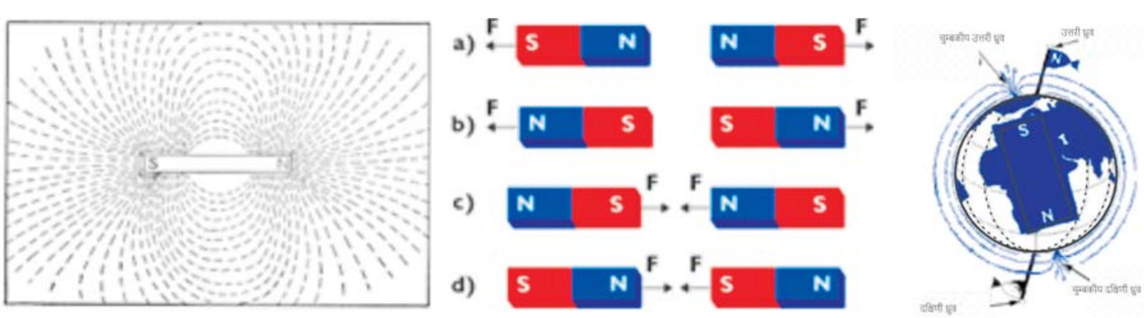

चित्र 1: चुम्बकीय क्षेत्र की विशेषताएं।

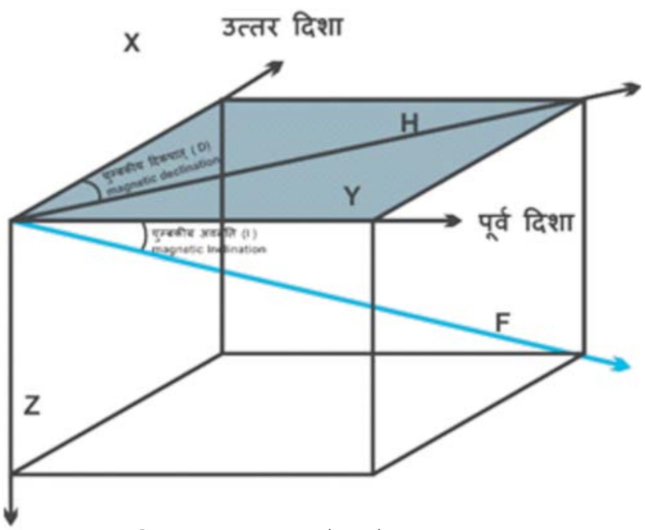

चित्र 2: चुम्बकीय क्षेत्र के घटक।

कहते हैं। इसके बाद के लगभग 2270 किमी चौडाई के गोलाकार वलय को बाहरी (वाहय्) क्रोड कहते हैं (चित्र 3)। यहाँ पर स्थित सभी धात्विक पदार्थ तरल अवस्था में है। इस स्थान पर ताप, दाब एवम् पदार्थों के संयोजन में परिवर्तन के कारण संवहन धाराए उत्पन्न होती हैं। पृथ्वी का अपने अक्ष पर घूर्णन भी इन संवहन धाराओ को बल प्रदान करता है। इन्हीं संवहन धाराओं के कारण पृथ्वी का चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न होता है (चित्र 3)।

यह चुम्बकीय क्षेत्र पृथ्वी सतह पर रिकार्ड किये गये चुम्बकीय क्षेत्र का मुख्य भाग होता है। पृथ्वी सतह पर रिकार्ड किये गये चुम्बकीय क्षेत्र में अन्य भाग, भू–पर्पटी पर धात्विक खनिजों के कारण उत्पन्न चुम्बकीय क्षेत्र तथा आयनोस्फेयर में आवेशित कणों की गति के कारण उत्पन्न विघुत धाराएँ एवम् तद्नुसार उत्पन्न चुम्बकीय क्षेत्र का होता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि पृथ्वी के चारो और चुम्बकीय क्षेत्र का आवरण होता है। यह आवरण चित्र 4 के अनुसार होता है। पृथ्वी के सूर्य से निकलने वाले आवेशित कणों की आँधी के कारण चुम्बकीय क्षेत्र का सूर्य की तरफ का आवरण पृथ्वी की तरफ दबाव महसूस करता है जिसके कारण यह संतुलन हेतु पृथ्वी की तरफ एक सीमा तक दब जाता है। इस सीमा को मेग्नेटोपास कहते हैं तथा यह पृथ्वी से पृथ्वी त्रिज्या के दस गुना दूर तक होता है जबकि सूर्य की विपरीत दिशा में पृथ्वी के भू–भाग के चारो और यह पूँछ की तरह लगभग पृथ्वी त्रिज्या के सौ गुने तक फैल जाता है। इस प्रकार पूँछ की तरह फैले इस क्षेत्र को मेग्नेटोटेल कहते हैं।

परन्तु सवाल यह उठता है कि पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र का हमारे लिये क्या उपयोग है तथा उसके आवरण का क्या लाभ है। तो यहाँ उल्लेख करना आवश्यक है कि पृथ्वी का चुम्बकीय क्षेत्र का आवरण ही हमें सूर्य से आने वाले

सारिणी 1: चुम्बकीय तीव्रत्रा (μT)।

क्रम स०	वस्तु का नाम	तीन सेमी की दूरी पर	तीस सेमी की दूरी पर	1 मी० की दूरी पर
1	हेअर ड्रायर	6 – 2000	0.001 – 7	0.01 – 0.03
2	इलेक्ट्रिक शेवर	15 – 1500	0.08 – 9	0.01 – 0.03
3	वेक्यूम क्लीनर	200 – 800	2 – 20	0.13 – 2
4	फ्लोरोसेन्ट लाईट	40 – 400	0.5 – 2	0.02 – 0.25
5	माइक्रोवेव ओवन	73 – 200	4 – 8	0.25 – 0.6
6	पोर्टेबल रेडियो	16 – 56	1	< 0.01
7	इलेक्ट्रिक ओवन	1 – 50	0.15 – 0.5	0.01 – 0.064
8	वाशिंग मशीन	0.8 – 50	0.15 – 3	0.01 – 0.15
9	आयरन	8 – 30	0.12 – 0.3	0.01 – 0.03
10	डिश वाशर	3.5 – 20	0.6 – 3	0.07 – 0.3
11	कम्प्यूटर	0.5 – 30	< 0.011	–
12	रेफ्रिजरेटर	0.5 – 1.7	0.01 – 0.25	< 0.01
13	कलर टीवी	2.5 – 50	0.04 – 2	0.01 – 0.15

सभी आँकडे विकिरण सूरक्षा के लिए फेडेरल ऑफिस, जर्मनी 1999 तथा इन्टरनेट से लिये गये हैं।

चित्र 3: पृथ्वी की आंतरिक संरचना व क्रोड़ में संवहन धाराओं का रेखा चित्र।

चित्र 4: पृथ्वी के बाहर चुम्बकीय आवरण।

हानिकारक विकिरणों से बचाता है। यह सौर हवा में आने वाले आवेशित कणों को रोककर पृथ्वी की ओजोन परत को नुकसान से बचाता है और ओजोन परत पृथ्वी में हानिकारक विकिरणों का प्रवेश रोकती है। यदि कभी यह देखना हो कि इस चुम्बकीय क्षेत्र के आवरण के न रहने पर पृथ्वी पर क्या समस्या हो सकती है तो हालीवुड की विज्ञान गल्प पर आधारित फिल्म "द कोर" देखी जा सकती है।

पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र का दुसरा महत्वपूर्ण अनुप्रयोग नेवीगेशन में है। समूद्री यात्राओं में, हवाई जहाज की यात्रा में व उपग्रह प्रेक्षण के लिये दिशा ज्ञान के लिए चुम्बकीय क्षेत्र तथा इसके गुणों का प्रयोग किया जाता है। इसके अभाव में क्या हम अपनी इन यात्राओं में सही गंतव्य तक पंहुचने की उम्मीद कर सकते हैं? शायद नहीं।

हम पुनः भू–चुम्बकीय क्षेत्र के अन्य गुणों की तरफ बढ़ते हैं। पृथ्वी के किसी एक बिन्दु पर चुम्बकीय क्षेत्र समय के साथ परिवर्तित होता रहता है। यह एक स्थान से दूसरे स्थान में जाने से भी परिवर्तित होता है। यह परिवर्तन दो प्रकार के होते है (1) अल्पकालिक परिवर्तन (2) दीर्घकालिक परिवर्तन। अल्पकालिक परिवर्तनों में दैनिक आवृत्ति वाले विचरण तथा तीव्र सौर आँधी के कारण होने वाले विचरण आते हैं। ये विचरण आयनोस्फेयर मे सूर्य के कारण बनने

सारिणी–2: चुम्बकीय क्षेत्र के अध्ययन का विकास क्रम।

द्वितीय शत्ताब्दी (बी.सी.)	: दिशा ज्ञान के लिए चाइनीज द्वारा लोडस्टोन का प्रयोग
बारहवीं शताब्दी (ए.डी.)	: युरोप मे चुम्बकीय कम्पास का प्रयोग
सन् 1600	: विलियम गिलबर्ट द्वारा लिखी गयी पुस्तक 'डी–मेग्नेटे' के रूप में पहला वैज्ञानिक विश्लेषण
सन् 1640	: स्वीडन में पहली बार लौह असस्क को खोजने में चुम्बकीय प्रेक्षणों का प्रयोग
सन् 1870	: त्वरित एवम् सटीक चुम्बकीय प्रेक्षणों के लिये थालेन और टाइबर्ग मशीनो का विकास
1960 के दशक में	: अत्यन्त संवेदनशील प्रकाशशोषक चुम्बकीय मापी का हवाई चुम्बकीय सर्वे हेतु विकास
सन् 1970 के दशक में	: दो सेंसरों के मध्य क्षेत्रान्तर मापने के लिये चुम्बकीय प्रवणतामापी का विकास।

सन् 1840 से भू–चुम्बकीय वैधशाला में परीक्षण
सन् 1960 से उपग्रह आधारित प्रेक्षण
1979, 1980 – मेगसेट उपग्रह
1999 – आरेस्टेड उपग्रह
2000 – चेम्प उपग्रह

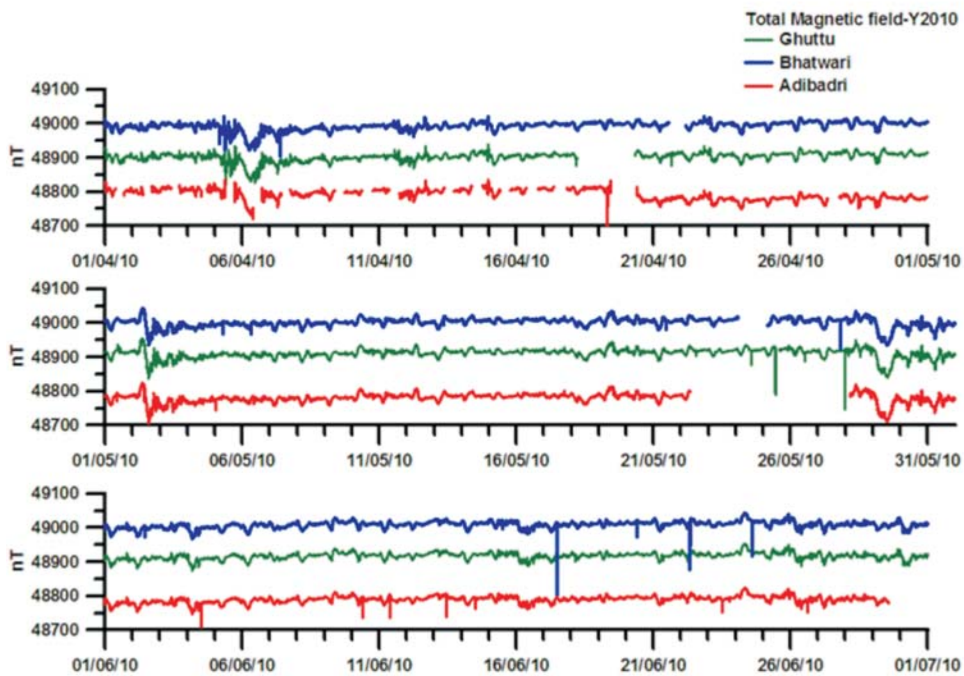

चित्र 5: घुत्तु, भटवारी तथा आदिबद्री में कुल चुम्बकीय क्षेत्र का रिकार्ड।

वाले डायनेमो के कारण होते हैं तथा इनमें भी समय, मौसम व स्थान के कारण परिवर्तन सदैव एक जैसे नही रहते हैं। चित्र–5 में बहुप्राचलिक वैधशाला घुत्तू, भटवारी तथा आदिबद्री में स्थापित चुम्बकत्वमापी के तीन माह के रिकार्ड प्रदर्शित किये गये हैं एक वर्ष या अधिक समयावधि को आवृत्ति के परिवर्तन दीर्घकालिन परिवर्तनों की श्रेणी में आते हैं। इनका मुख्य कारण पृथ्वी की घूर्णन गति में भिन्नता होना है। प्रश्न् उठता है कि इन परिवर्तनों का अध्ययन क्यों आवश्यक है एवम् इसके क्या लाभ हैं। तो सरल शब्दों में जवाब है कि आज का डिजिटल युग जो कि सैटेलाइट पर निर्भर है, उस सेटेलाइट को सुचारू रूप से कार्य करने के लिये चुम्बकीय क्षेत्र मे परिवर्तनों की जानकारी एवम् इनकी भविष्यवाणी आवश्यक है और यह कार्य अन्तरिक्ष मौसम की निगरानी में आता है।

भू–चुम्बकीय क्षेत्र में परिवर्तन का उपयोग भू–भौतिकीयज्ञ भू–गर्भीय जानकारी एकत्रित करने में भी करते है। भू–चुम्बकीय क्षेत्र में होने वाले परिवर्तन पृथ्वी की चट्टानों पर प्रेरण सिद्धांत के आधार पर विघुत–चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न करते हैं। पृथ्वी की सतह पर विधुत–चुम्बकीय क्षेत्र का प्रेक्षण लिया जाता है। इन विभिन्न जगहों पर लिये गये प्रेक्षणों को मैक्सवेल के विधुत चुम्बकीय सिद्धांत के आधार पर आकलन करने पर विभिन्न गहराइयों पर स्थित चट्टानों के विद्युत गुण जैसे चालकता, प्रतिरोधकता का अनुमान प्राप्त होता है। किसी क्षेत्र विशेष की विभिन्न जगहों के प्रेक्षणों से प्राप्त अनुमानों के आधार पर उस क्षेत्र की शैल संरचना विवर्तनिकी व भू–गतिकी को समझने का प्रयास किया जाता है।

एक अन्य प्रकार के भू–चुम्बकीय सर्वेक्षण में विभिन्न स्थानों पर चुम्बकीय क्षेत्र का प्रेक्षण लेते हैं तथा इन प्रेक्षणों से भू–चुम्बकीय क्षेत्र के मुख्य भाग तथा चुम्बकीय क्षेत्र में आयनोस्फिरक योगदान को विभिन्न विधियों से अलग कर उस क्षेत्र की विशेषता को भू–पर्पटी में स्थित शेलों के चुम्बकीय गुणों का अध्ययन किया जाता है। जिससे स्थान विशेष की शैल संरचना, विवर्तनिकी को समझने मे सहायता मिलती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि भू–चुम्बकीय क्षेत्र न केवल हमारे अस्तित्व बल्कि जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में हमारे लिये उपयोगी हैं।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि उपरोक्त संक्षिप्त विवरण मे हमने पुराचुम्बकत्व व शैल चुम्बकत्व विषय पर चर्चा नहीं की है। इन पर भविष्य में एक विस्तुत लेख की संभावना है।

प्रकृति का स्वरूप

दल बहादुर खत्री
डील, देहरादून

संसार में स्थित विभिन्न प्रकार के पेड–पौधे, ईठलाती–बलखाती नदियाँ–झरने, झील–तालाब उनमें खिलते कमल, पन–चक्कियाँ, कोल्हू, बैल गाडियों की चरचराहट, झूलेदार पुल, साँप की तरह रेंगती पगडंडियाँ, सुंदर झोपडियाँ, घने जंगल, सावन के झूले, आम–पीपल की हरी–भरी एवं बर्फ से ढकी पहाडियाँ, विभिन्न प्रकार के पशु–पक्षी उनकी कौलाहट–चहचहाहट, अथाह समुद्र तथा उसकी गहराई उसमें विचरण करती रंग बिरंगी मछलियाँ एवं विशालकाय जीव–जंतु, घर–आँगन में चहल–पहल करते पालतू जानवर एवं पक्षी, सुबह के सूरज की लाल किरणें, चाँद की चाँदनी, नीला आकाश, तारों की टिमटिमाहट, बरसात में उमड़ते बादल, रिमझिम बरसात, प्रातः काल की मोती जैसी ओस की बूँदें, तपती गर्मी, कँपकँपाती सर्दी, शुद्ध हवाओं के थपेडे, बहुरंगी फल–फूल उनकी सुगंध–महक, लहलहाते खेत, चारों तरफ हरियाली ही हरियाली साथ में स्वस्थ जीवन के लिए शुद्ध वायु, जल एवं भोजन। "यही तो प्रकृति का स्वरूप है"।

शिशु के जन्म लेने के साथ ही प्रकृति उसका खुलकर स्वागत करती है। जन्म लेते समय बालक प्रकृति के स्वरूप से बिल्कुल अनभिज्ञ होता है। वह धीरे–धीरे स्वंय को प्रकृति के अनुसार ढालना शुरू करता है और शीघ्र ही प्रकृति के अनुरूप ढल भी जाता है। उसके बाद वह सारी जिंदगी इस प्रकृति के परिवेश में रह कर गुजारता है। पहले बालपन, जवानी तथा अंत में बूढ़ा हो कर इसी प्रकृति के आगोश में समा जाता है। अपने जीवनकाल में मनुष्य प्रकृति के विभिन्न पहलुओं से रूबरू होता है। वह इस प्रकृति का आनंद किस प्रकार या कितने समय के लिए उठा पाता है, इस बात पर निर्भर है कि उसके चारों तरफ की प्रकृति का स्वरूप कैसा है, लेकिन बडे अफसोस की बात है कि आज मनुष्य प्रकृति के उसी स्वरूप एवं परिवेश को तहस–नहस करने में जुटा हुआ है जिसमें रहकर उसने अपनी सारी जिंदगी गुजारनी होती है।

मुझे मेरे बचपन की प्रकृति से जुड़ी प्रत्येक घटना ज्यों कि त्यों याद है, मुझे याद है बचपन में जब हम घर के आस–पास की नदियों में जाते थे, जिसमें अनेकों प्रकार की रंग–बिरंगी मछलियाँ तैरा करती थीं। साथ ही नदियों के आस–पास विभिन्न प्रकार के बतख, जलमुर्गी, बगुला, मुर्गाबी, गोताखोर पक्षी विचरण किया करते थे। प्रकृति के उस आनंद का मजा लेने के लिए कई बार तो हम स्कूल से भी अनुपस्थित हो जाया करते थे। उस समय यदि कोई जानवर मर जाता था तो नदी किनारे उसे खाने के लिए रंग–बिरंगी तथा सुनहरे कलगी वाले गिद्ध तथा चील एकत्रित होते थे, जिनको निहारने का मजा ही कुछ और था। इसके अलावा खेल–खलिहानों में मोर का नाचना, बुलबुल का गाना, बया पक्षी का घोसला बनाना, रंग–बिरंगी तितलियों का फूलों में मंडराना, कोयल की कू–कू, आस–पास के जंगलों में जानवरों का चिल्लाना, प्रातः काल मुर्गे की बाँग, कौवों की काँव–काँव, पक्षियों की चहचहाहट, गाय–भैंसों का रम्भाना, भेड–बकरियों की आवाजें, कुत्ते का भौंकना, बिल्ली की म्याँउ–म्याँउ घर–आँगन में गौरेयों की चूँ–चूँ, कबूतरों की गूटर–गूं आदि लगता है जैसे कल की ही बात हो। फिर सोचने पर विवश हो जाता हूँ कि प्रकृति के वे नजारे और शोरगुल आखिर कहां गुम हो गए?

उस समय हम संयुक्त परिवार में रहते थे और छोटे–छोटे घास–फूस के घर हुआ करते थे, लेकिन उनकी साफ–सफाई और सजावट देखते ही बनती थी। माँ सुबह उठकर घर के अंदर और आँगन में गोबर से लीपाई करतीं, घर के चारों तरफ झाडू लगातीं, घर के मुख्य दरवाजे को फूलों से सजाती और पूजा–पाठ करती थीं। फिर गाय भैसों का दूध निकालती तथा उनको घास–चारा देती तथा उनकी सेवा ऐसे करती थीं जैसे वे उनके अपने बच्चे हों। फिर चूल्हा जलातीं तथा गरम–गरम रोटियाँ सेंक कर ताजी सब्जी के साथ हमें परोसती थीं। उपर से एक ग्लास गरम दूध पिलाती थी। घर के सभी काम निपटाने के साथ–साथ व जंगल से घास और लकडियाँ भी काट कर लाती थीं। देर रात तक काम में ही व्यस्त रहती थीं। फिर समय निकालकर हमें लोरियाँ भी सुनाती थीं लेकिन उनके चेहरे पर हमेशा एक आभा, चमक और मुस्कुराहट होती थी,

संतुष्टि की एक झलक होती थी। मैंने उनको कभी भी थकते और निराश होते हुए नहीं देखा।

मेरे मानस—पटल पर आज भी मेरे बचपन की प्रत्येक तस्वीर ज्यों की त्यों है। माँ का आँख दिखाना फिर मुस्कुराकर हमें दुलारना तथा उनकी गोद में सिर रखकर लेटना, चाचा—चाची का प्रेमभाव से डांटना—फटकारना, पापा का बनावटी गुस्सा और प्यार, भाई—बहनों की क्षणिक लड़ाई, फिर एक दूसरे के प्रति स्नेह, दादा—दादी की नकली झल्लाहट, ताऊ—ताई का बार—बार थप्पड़ दिखाना, बुआ का भौंह तानना, नाना—नानी की स्नेहमयी ममता तथा समस्त परिवार का एक दूसरे के प्रति सम्मान, समर्पण और एक सम्पुर्ण सुरक्षा की भावना आदि लगता है जैसे कोई गहरा ख्वाब था। मुझे याद है इतना बडा परिवार और रहने के लिए कच्चे घर के दो कमरे, लेकिन फिर भी हमें कभी महसूस ही नहीं होता था कि हमारा घर छोटा है। कच्चे घर में रहते हुए भी गर्मी के दिनों में पंखे की हवा का तथा जाड़ों में हीटर का आभास होता था। बचपन में हम सभी भाई—बहन मात्र एक लालटेन या चिमनी की रोशनी में भी इस प्रकार आसानी से पढाई कर लेते थे जैसे खूब सारी ट्यूब लाईट की रोशनी के नीचे बैठ कर पढ़ रहे हों। ऐसा लगता है जैसे ये कल की ही बात हो।

बचपन में शरारत करना, नंगे पाँव स्कूल जाना, बरसात में भीगना, कीचड़ में लोट—पोट होना, तालाबों में नहाना, भैंस की पीठ पर सवारी करना, साईकिल चलाना, पेड़ की छाँव में लेटना, गुल्ली—डंडा खेलना, दूसरों के कंचे जीतना, कपडे की गेंद उछालना, बेसरम के डंडे से हाकी खेलना, रामलीला एवं कठपुतली का खेल देखना, नदियों में तैरना और मछली पकड़ना, पतंग उड़ाना, आईस—पाईस तथा चोर—सिपाही का खेल खेलना, कबड्डी तथा कुश्ती में एक दूसरे को पछाड़ना, खो—खो खेलना, नीम—बबूल की टहनी तोडकर दाँत साफ करना आदि आज भी मुझे पूर्ण रूप से याद हैं। ये सभी बाल—क्रीड़ायें हमें पूर्ण रूप से प्रकृति से जोड़ती थीं जिससे हमारा शरीर बलिष्ट होकर प्रकृति के हर थपेड़े को आसानी से सह लेता था और बीमारियाँ हमारे नजदीक भी नहीं फटक पाती थीं। परंतु आज हम दिन—प्रतिदिन इनसे दूर होते जा रहे हैं। आज के बच्चों में कहाँ है इतना समय कि वे इन प्राकृतिक चीजों का भरपूर आनंद उठा सकें. उनका बचपन तो मात्र बस्तों के बोझ तले दब कर रह गया है।

मुझे अच्छी तरह याद है, उस समय गाँव के सभी लोग चाहे वे किसी भी धर्म के हों एक दूसरे की मदद के लिए हमेशा तत्पर रहते थे। बडे लोग दिन भर खेत—खलिहानों में काम करने के बाद अपनी थकावट को दूर करने के लिए रोज शाम को गाँव के किसी एक घर में एकत्रित होते थे, हुक्के का मजा लेने के साथ—साथ आपस में सलाह—मश्वरा करते थे, दिन भर के अपने कार्यो की चर्चा करते, एक दूसरे की परेशानी के बारे में पूछते और तन,मन,धन से उसे दूर करने की कोशिश करते थे। मैंने उन लोगों को कभी भी जाति—धर्म की चर्चा करते नहीं सुना। उस समय के लोगों का भाईचारा तो देखते ही बनता था।

बुजुर्गों की आज्ञा को सर आँखों पर रखकर सम्मान किया जाता था। उनके हर आदेश को तुरन्त निभाया जाता था, जिससे बुजुर्ग लोग स्वंय को गौरवशाली एवं पूर्ण रूप से सुरक्षित समझते थे, साथ ही जीवन के प्रति उत्साहित रहते थे, बूढ़े लोग भी स्वंय को बिल्कुल स्वस्थ समझते थे और दीर्घायु को प्राप्त करते थे। बीमारियाँ जैसे कोसों दूर थीं। साथ ही उस समय के लोगों में ईमानदारी, अनुशासन, समर्पण, दया, प्रेम, ममता, कर्मठता और एक दूसरे के लिए मदद की भावना कूट—कूट कर भरी होती थी। वे लोग दुसरों के दुख को अपना दुख तथा दुसरों की खुशी को अपनी खुशी समझते थे।

उस समय के त्योहारों की धूम, मेलों के नजारे, शादी—विवाह की रौनक, ढोल—नगाडों की थपथपाहट आज भी मेरे मस्तिष्क में एकदम तरोताज़ा है। मुझे बिल्कुल याद है जब दशहरे का त्योहार आता था तो हमारे गाँव में एक महीना पहले ही इसकी तैयारियाँ शुरू हो जाया करती थी। रामलीला का आयोजन हमारे गाँव में ही सम्पन्न होता था। जिसे लगभग चार—पाँच गाँव मिलकर पूरा करते थे। ठंडी रातों में मुंगफली चबाते हुए रामलीला देखेने का मजा आजकल के सिनेमा घरों में कहाँ मिलता है? दस दिन तक कलाकारों द्वारा राम के जन्म से लेकर राम वनवास तक के अनेकों दृश्यों को इस प्रकार चरितार्थ किया जाता था जैसे सभी घटनाएँ काल्पनिक न होकर वास्तविक हों। जिसके साथ ही गाँव में एक बहुत बडे मेले का भी आयोजन होता था। जिसमें विभिन्न प्रकार के झूले तथा कई प्रकार के व्यंजनों की छोटी—छोटी दुकानें लगाई जाती थी जैसे आम—पापड़, आदि। गाँव के सभी स्त्री—पुरूष तथा बच्चे इन व्यंजनों का बढ़—चढ़कर आनंद लिया करते थे। उस

समय का होली–मिलन तो अनोखा ही हुआ करता था। हिन्दु हो या मुसलमान या फिर सिक्ख–ईसाई सभी एक दूसरे को आपस में गुलाल लगाकर प्यार से इस प्रकार गले मिलते थे जैसे वे एक ही परिवार के सदस्य हों। धर्म तथा जाति के भेदभाव का दूर–दूर तक कहीं नामोनिशान नहीं था। ईद के दिन मुसलमान भाईयों के साथ गले मिलकर उनके घरों में बनी हुई सिंवई को खाने का मजा ही कुछ और होता था।

लेकिन जब बचपन की यादों से निकलकर बाहर आता हूँ और आज के वातावरण को देखता हूँ तो एक घुटन सी होती है। ऐसा लगता है जैसे हम जिंदगी की हर बाजी हारते जा रहे हैं। आज जब अपने चारों तरफ नजर दौडाता हूँ तो हर तरफ उजड़ा हुआ सा दिखाई देता है और यह सोचने पर विवश हो जाता हूँ कि आखिर कहाँ गई धरती की वो हरियाली, कहाँ हैं वे हरे–भरे वन–जंगल? नदी–नाले सूख चुके हैं, झरने भी बहने बंद हो गए हैं, कहीं नहीं दिखते झील–तलाब और उनमें खिलते कमल? आखिर कहाँ हैं रंग–बिरंगी मछलियाँ? नहीं दिखते मुर्गाबी, जलमुर्गियां, बत्तख, गोताखोर पक्षी। कहाँ चले गए वे सुनहरे कलगी वाले गिद्ध, नृत्य करते मोर? कहाँ हैं गौरेयों की चूँ–चूँ, कबूतरों की गूटर–गूँ, मुर्गे की बाँग, कौवों की काँव–काँव, कोयल की कू–कू आदि? आखिर कहाँ ओझल हो गई छोटी–छोटी झोपड़ियाँ, रेंगती हुई पगडंडियाँ, झूलेदार पुल, बर्फ से ढ़की पहाड़ियाँ, सावन के झूले, आम–पीपल की छाँव, बहुरंगी फूल उनकी महक–खुशबू, लहलहाते हुए खेत, धरती की वो हरियाली, पनचक्कियाँ, कोल्हू तथा घर–आँगन में विचरण करते पशु–पक्षी? यहाँ तक कि नीला आकाश, सूरज की लालिमा, चाँद की चाँदनी, तारों की टिमटिमाहट भी अब शायद धूमिल पड़ चुके हैं।

छोटे–छोटे गाँव अब शहर में बदल गए, झोपड़ियाँ बड़ी ईमारतों में तबदील हो गई, कोल्हू तथा पनचक्कियों ने कारखानों का रूप ने लिया, बैलगाड़ियों के स्थान पर अब विभिन्न प्रकार के वाहन आ गए, समाज को जाति–धर्म के नाम पर बाँटा जाने लगा, संयुक्त परिवार अब एकाकी हो गए, रिश्ते धन–दौलत के बोझ तले दब गए, भाईचारे ने ईर्ष्या तथा प्रतिस्पर्धा का रूप ले लिया, गाँव की रामलीला अब बड़े थियटरों में दिखायी जाने लगी, कठपुतली के खेल और नाटक टी0वी0 चैनलों में रूपान्तरित हो गए, सांप की तरह रेंगती पगडंडियां अब शहरी रोड़ बन गए, झूलेदार पुल बड़े–बड़े ब्रिज बन गए। हरियाली की जगह कचरे और कूडे के ढेर बिछ गए। चारों तरफ गंदगी फैल गई और वातावरण बुरी तरह से प्रदूषित हो गया। बड़ी बिडम्बना है कि कभी भरपूर समाज के दायरे में रहने वाले लोग आज केवल अपने तक ही सीमित होकर रह गए। साथ ही माँ की लोरियों के बदले डेक और म्युजिक सिस्टम के आधुनिक गाने सुने जाने लगे। दादा–दादी का प्यार, भाई–बहन के झगडे, पापा की डाँट, चाच–चाची का थप्पड़ दिखाना, नाना–नानी का स्नेह आदि आज इतिहास के पन्ने बनकर रह गए।

बचपन की वो शरारत, शोखियाँ एवं चंचलता आज के बच्चों में नहीं दिखती। पता नहीं क्यों वे सहम से गए है। भैंस की पीठ तथा साईकिल के बदले आज बच्चे बाईक की सवारी करने लगे। नंगे पाँव की जगह कीमती जूते एवं टाई पहनकर स्कूल जाने लगे। बरसात की बारिश के बदले आधुनिक फुहारों–शावरों में भीगने लगे, कपड़ों की गेंद के बदले सिंथेटिक बॉल से खेला जाने लगा। बेसरम के डंडे कीमती हाकी में बदल गए। आईस–पाईस, चोर–सिपाही, गुल्ली डंडा, खो–खो तथा कंचे आदि खेल के स्थान पर वीडियो गेम खेला जाने लगा, नीम–बबूल की टहनियों के बदले बाजार में कई प्रकार के रासायनिक दूथ पेस्ट आ गए। इसलिए आज के बच्चों की शारिरिक क्षमता तो दुर्बल हो ही रही है साथ ही उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता भी दिन–प्रतिदिन क्षीण होती जा रही है। कहने का तात्पर्य यह है कि आज हम प्रकृति को पीछे छोड़कर आधुनिकता के दौर में इस कदर आगे बढ़ चुके हैं कि मुझे नहीं लगता कि आने वाली पीढ़ी के बच्चे प्रकृति की उस छटा और स्वरूप को कभी निहार भी पाएंगे?

यह बात सही है कि किसी देश की उन्नति उस देश के तकनीकी विकास पर निर्भर करती है, लेकिन प्रकृति को दाँव पर रखकर देश की उन्नति करना कहाँ तक उचित है? आज मनुष्य अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए आए दिन जंगलों को उजाड़ रहा है। उनको आग के हवाले के हवाले कर रहा है। अपने चारों तरफ कचरे के ढेर इकट्ठे कर रहा है। खेत खलिहानों को प्लाटिंग करके बेच रहा है। दूध तथा प्रत्येक खाद्य सामग्री में खतरनाक रसायन मिला रहा है। अपनी फसल बढ़ाने के लिए खेत में हानिकारक कीटनाशक दवाईयाँ छिड़क रहा है। अपने व्यवसाय को उपर उठाने के

लिए कल–कारखानों द्वारा नदी के स्वच्छ पानी को गंदा कर रहा है। साथ ही विभिन्न प्रकार के वाहनों तथा आधुनिक सुख–सुविधाओं के साधनों द्वारा पर्यावरण को दूषित कर रहा है। इसके अलावा अवैध एवं हानिकारक ऐसे कृत्रिम संसाधनों का धड़ल्ले से उत्पाद कर रहा है जिनको निस्तारित करना एक टेढ़ी खीर है। क्या उसे जरा भी अहसास है कि इन सब का असर उसके जीवन पर भी तो पड़ रहा होगा? उसके अपने बच्चे और परिवार भी तो इस कृत्रिम युग की चक्की में पिस रहे होंगें। उनकी शारीरिक शक्ति का भी तो ह्रास हो रहा होगा। उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता का भी तो पतन हो रहा होगा और साथ ही उनकी उम्र की सीमा भी तो दिन–प्रतिदिन कम हो रही होगी? यह बड़े ही चिंतन का विषय है जिसके बारे में हमें बार–बार सोचना होगा और सूक्ष्म रूप से इसका विश्लेषण एवं निवारण करना होगा अन्यथा वह दिन दूर नहीं जब हम अपने अस्तित्व को ही पूर्ण रूप से खो चुके होंगें। आज जिस प्रकार के प्राकृतिक प्रलय देखने को मिल रहे हैं उनकी शायद हमने कभी कल्पना तक भी नहीं की होगी। उत्तराखण्ड के केदारनाथ में बादलों का फटना, जम्मू–कश्मीर में बाढ का प्रकोप, हिमाचल प्रदेश में बरसात का ताण्डव, महाराष्ट्र का भूस्खलन हो या फिर नेपाल में आए भूकम्प का विनाशकारी प्रलय। इन सभी घटनाओं का संबन्ध किसी ना किसी रूप में यह दर्शाता है कि मनुष्य ने ही प्रकृति के साथ छेड़–छाड़ करके इस प्रकार की घटनाओं को घटित होने के लिए बाध्य किया है। क्योंकि मनुष्य का हमेशा से ही प्रकृति के साथ छेड़–छाड़ करने का स्वभाव रहा है।

साथ ही आए दिन जंगली जानवरों द्वारा मनुष्य और पालतू जानवरों पर आक्रमण, जंगली हाथियों का तांडव और खेत खलिहानों को रौंदना, जंगली सूअरों द्वारा फसलों को चौपट करना, विभिन्न प्रकार के जंगली जानवरों का आबादी क्षेत्र में प्रवेश करना, बंदरों द्वारा बाग–बगीचों तथा सब्जियों को हानि पहुँचाना आदि इस बात की ओर इशारा करते हैं कि उनके रहने के ठिकानों अर्थात जंगलों को उजाड़ दिया गया। इसके अलावा अपनी लालसा को पूरा करने के लिए मनुष्य ने धड़ल्ले से पशु–पक्षियों का शिकार भी किया जिससे जंगली पशु–पक्षियों की कई दुर्लभ प्रजातियाँ या तो पूर्ण रूप से विलुप्त हो गई हैं या फिर विलुप्त होने की कगार पर हैं। बाकी बचे हुए चंद पशु–पक्षी भोजन और घर की तलाश में अबादी क्षेत्र में आने को विवश हो गए हैं ।

अभी भी समय है कि हम प्रकृति के स्वरूप को एक चुनौती मान कर इस विषय पर कुछ ऐसा करें कि इस त्रासदी को किसी भी प्रकार रोका जा सके। प्रकृति की जिस छटा को हम खो चुके हैं उसे वापस तो नहीं लाया जा सकता है पर हाँ बची हूई प्रकृति की छटा को और अधिक दूषित होने से अवश्य रोका जा सकता है। अर्थात यदि हम मिलकर कोशिश करें तो इसे यहीं पर स्थिर किया जा सकता है। प्रकृति के संरक्षण से सम्बंधित बहुत सारी ऐसी बातें हैं जिनको अमल में लाने हेतु हमें प्रतिबद्ध हो कर एक दृढ़ संकल्प लेना होगा कि हमें किसी भी हालत में अपने बच्चों के अच्छे स्वास्थ्य एवं दीर्घायू हेतु प्रकृति की बची हुई छवि को बरकरार रखना ही है। चाहे उसके लिए हमें कितनी भी कठिनाईयों से जूझना क्यों न पड़े।

आज के अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा के युग में देश की तकनीकी को विकास स्तर पर आगे ले जाना भी जरूरी है। आज विश्व के वही देश सुखी और सम्पन्न है जो देश तकनीकी विकास में सक्षम हैं। लेकिन क्या देश की उन्नति के लिए प्रकृति का दोहन करना जरूरी है? बीच का कोई ऐसा रास्ता भी तो चुना जा सकता है जिससे प्रकृति को नुकसान किए बिना ही देश की तकनीकी को आगे ले जाया जा सके। इसके लिए सबसे पहले हमें यह संकल्प लेना होगा कि हम न तो हरे–भरे जंगलों को नुकसान पहुँचाएंगे और ना ही किसी को नुकसान पहुँचाने देंगे। इसके लिए हमें अधिक से अधिक वृक्षारोपण करना होगा, जिससे प्रकृति के स्वरूप को निखारा जा सके। साथ ही अपने सामाजिक दायरे में रहने वाले लोगों को भी इसके बारे में प्रोत्साहित करना होगा। यदि हमारे देश का प्रत्येक नागरिक पाँच–पाँच पौधे भी लगाता है तो देश की जनसंख्या के अनुरूप छह अरब पच्चीस करोड पौधे लगाए जा सकते हैं।

साथ ही सरकार को भी इसके लिए सार्थक प्रयास करना चाहिए। सबसे पहले सरकार को जल, वायु तथा भू–स्खलन के वेग को कम करने के उपायों पर जोर देना चाहिए तथा इस विषय पर गहनता से अनुसंधान करना चाहिए, जिससे प्रकृति को संतुलित किया जा सके। फिर देश के कोने–कोने में फैले हुए कूड़े–कचरे के ढेर को शीघ्र

से शीघ्र विस्थापित करना चाहिए, जो अनेक प्रकार की बीमारियों के जनक हैं। कूड़े–कचरे के ढेर को विभिन्न प्रकार की परियोजनाओं में लगाया जा सकता है। जैसे इन कचरों से पक्की सड़क बनाई जा सकती है साथ ही इनसे सिंथेटिक गैस भी बनाई जा सकती है। सिंथेटिक गैस द्वारा विद्युत उर्जा पैदा की जा सकती है और कुकिंग गैस तथा जैविक खाद आदि परियोजनाओं में भी इसका प्रयोग किया जा सकता है। इसके अलावा सरकार को औधोगिक संस्थानों, विभिन्न प्रकार के वाहनों एवं आधुनिक संसाधनों द्वारा आए दिन फैलाये जाने वाले अनेक प्रकार के प्रदूषण को कम करने के ठोस उपाय करने चाहिए। कृषि के लिए प्रयोग किए जाने वाले हानिकारक रासायनिक खाद पर तुरंत रोक लगाना चाहिए तथा जैविक खाद को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। आए दिन खाद्य सामाग्रियाँ पर मिलाए जाने वाले खतरनाक रासायनिक पदार्थो पर भी रोक लगाना जरूरी है। साथ ही पैकिंग आदि में प्रयोग होने वाले कृत्रिम चीजों के पुनः निर्माण पर सख्त पाबंदी लगाने की जरूरत है। देश के कोने–कोने में हर रोज किए जाने वाले अवैध–खनन पर भी प्रतिबंध लगाना होगा। इसके अलावा सरकार को उपरोक्त क्रिया–कलापों को रोकने हेतु एक सख्त और पुख्ता कानून बनाना होगा।

साथ ही सरकार को यह भी चाहिए कि उपरोक्त विषय को अमल में लाने हेतु देश के सभी सरकारी एवं गैर–सरकारी संस्थानों को एक सख्त अध्यादेश जारी करे। यदि ऐसा होता है तो हम भविष्य में काफी हद तक प्रकृति की बची हुई छवि, आभा एवं स्वरूप को बचाने में सफल हो सकते हैं और यह भी हो सकता है कि आने वाले समय में कम मात्रा में ही सही, हमारे बच्चे वही लहलहाते हुए खेत–खलिहान, हरे–भरे जंगलों के अलावा प्रकृति के लगभग वे सभी नजारे देख पाएं जो हमारे जमाने में हुआ करते थे। इसके अलावा उनको वही शुद्ध वायु जल तथा भोजन नसीब हो जिनकी आज मात्र एक कल्पना ही की जा सकती है। इन्हीं कामनाओं के साथ मैं अपनी वास्तविक कल्पनाओं की उड़ान के पंखों को यहीं विराम देता हूँ।

स्टीफन हाकिंग (एक महान वैज्ञानिक)

एन.के. तिवारी
जी–3, हाथीबड़कला स्टेट, देहरादून

शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा, जिसने विज्ञान के क्षेत्र में स्टीफन हाकिंग का नाम न सुना होगा। वह अपने अदम्य साहस, गजब के आत्म विश्वास के बल पर अपने जीवन में सफल रहे। ऐसे व्यक्तित्व से हमें निरंतर आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलती है। इस महान वैज्ञानिक का जन्म दूसरे महायुद्ध के दौरान 8 जनवरी, 1942 को आक्सफोर्ड, इंग्लैंड में हुआ था। इनकी माता का नाम इसोबेल था जो कि एक राजनीतिक कार्यकर्ता थीं तथा उनके पिता का नाम फ्रेंक था जो कि ग्लासगो में डाक्टर थे। इनकी दो बहनें फिलिया एवं मैरी तथा एक भाई एडवर्ड था तथा इनकी दो पत्नियाँ जेन वाइल्डे तथा एलिना थी। इनके पुत्र का नाम टिम तथा पुत्री का नाम लूसी हाकिंग है।

स्टीफन हाकिंग में युवावस्था के दौरान कुछ विलक्षण नहीं था। संयोगवश वे बुद्धि में न्यूटन और आइंस्टीन के समक्ष थे। परंतु 21 वर्ष की आयु में एक असाध्य रोग मोटर न्यूरान रोग (एक्थोट्रोफिक लेटरल स्केलेरोसिस) से पीड़ित हो गये। इसके बावजूद वे अपने जीवन के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सफल हुए।

स्टीफन हाकिंग को बचपन में खेलकूद में अधिक रूचि नहीं थी। परंतु उन्हें नाव खेने में पढ़ाई से ज्यादा आनंद प्राप्त होता था। स्टीफन हॉकिंग ने 1962 में आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से ब्रहमांडिकी एवं सामान्य आपेक्षिकता पर अनुसंधान किया था। सन् 1974 में आपेक्षिकता के सिद्धांत और पुँज सिद्धांत दोनों को उन्होंने एकीकृत करने का प्रयास किया।

एक बार उन्होनें अपना एक पेपर "कृष्ण विवर विस्फोट सिद्धांत" से संबंधित विशाल सम्मेलन में प्रस्तुत किया जो कि उस समय वहॉ उपस्थित वैज्ञानिकों की समझ से परे था। जिनकी समझ में आया वो भी इससे घबरा गये। सभा के अध्यक्ष लंदन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर थे। वे उठकर परेशान होकर बोल उठे "स्टीफन तुम जो कर रहे हो, वह अर्थ हीन है तथा यह कूड़ेदान में फेंकने योग्य है"। कुछ समय पश्चात हॉकिंग के उसी कूड़े को विज्ञान की पत्रिका "नेचर" ने प्रकाशित किया। कुछ ही दिनों में वह प्रसिद्ध भौतिक विज्ञानियों की श्रेणी में आ गये तथा हॉकिग का नाम दुनिया भर में प्रसिद्ध हो गया।

स्टीफन हॉकिग ने ब्रहमांड के सम्बन्ध में "ब्रीफ हिस्ट्री आफ टाईम" शीर्षक से एक पुस्तक लिखी जो 1988 में प्रकाशित हुई। जिसने अत्याधिक ब्रिकी के कारण गिनीज बुक आफ रिकार्ड्स में अपना नाम दर्ज कराया। इसके अतिरिक्त उन्होनें 1933 में "ब्लैक होल्स एंड बेबी–यूनिवर्स" तथा कुछ अन्य निबंध प्रकाशित कराये तथा 2001 में "यूनिवर्स इन नट शेल" पुस्तक में भौतिकी में हाल की खोजों का वर्णन किया है।

खगोल भौतिकी के क्षेत्र में उनके सराहनीय योगदान के लिए समय–समय पर विभिन्न संस्थाओं ने उन्हें सम्मानित किया। 1975 में उन्हें एडिंगटन मेडल से सम्मानित किया गया है। 1976 में ह्यूज मेडल आफ रायल सोसाइटी, 1979 में अल्बर्ट आंइस्टाइन मेडल तथा 1982 में ब्रिटेन की महारानी द्वारा आर्डर आफ द ब्रिटिश एंपायर (कमांडर) प्रदान किया गया। 1985 में रायल एस्ट्रोनामिकल सोसाइटी के स्वर्ण पदक से सम्मानित किया गया। 1999 में अमेरिका भौतिकी सोसाइटी का जूलियस एडगर लिलिन फील्ड पुरस्कार से नवाजा गया। इसके अतिरिक्त 12 अगस्त 2009 को अमेरिकी "राष्ट्रपति पदक" से सम्मानित किया गया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि यदि व्यक्ति में मजबूत इच्छा शक्ति हिम्मत, धैर्य हो तो वह असाध्य बाधाओं के रहते हुए भी अपने जीवन के लक्ष्यों की प्राप्त कर सकता हैं।

ए पी जे अब्दुल कलाम – एक प्रेरणा

राकेश कुमार
डील, देहरादून

दुपहरी–धूप में तपकर, निखर जाते हैं वो बच्चे।
जिनके सिर पर माँ का भी, आँचल नही होता।।

बुरी नजरों से बचकर वे, पा लेते हैं मन्जिल को।
चेहरे पर जिनके एक टीका, काजल नही होता।।

एक सोच थी, जीवन का अर्थ बदल गयी।
ऐसा विचार हृदय में, हर पल नहीं होता।।

कुछ तो बात थी उनमें, जो औरों से हट के थी।
हरेक मुकाम पर कोई, यूँ ही सफल नहीं होता।।

फर्श से अर्श तक सफर, तन्हा गुजारा है।
इतना भी शख्स कोई, जिन्दादिल नहीं होता।।

अपने देश के लिये, कुछ कर गुजरना है।
"ज्वलन्त मस्तिष्क" में यह विचार, निर्बल नही होता।।

सफलताओं ने सजाया उन्हें, राष्ट्र के शीर्ष – आसन पर।
जमाना यूँ ही किसी का, कायल नही होता।।

राह दिखायेंगे न जाने, अभी और कितनों को।
गगन से ध्रुवतारा, कभी ओझल नही होता।।

बनेंगे कलाम और भी, कलाम के कमाल से।
एकलव्य सा निश्चय, कभी मुश्किल नहीं होता।।

मेरे देश के बारूद को, अग्नि – पंख नहीं लगते।
गर मिसाइलमैन के सीने में, दावानल नहीं होता।।

विश्व हिन्दी सम्मेलन/विश्व हिन्दी दिवस तथा प्रवासी भारतीयों का संक्षिप्त हिन्दी इतिहास

कान्ता मोहन रावत
ओ.एन.जी.सी., तेलभवन, देहरादून

जिस तरह भारत में 14 सितम्बर, का एक विशेष महत्व है उसी प्रकार 9 जनवरी को प्रवासी भारतीय दिवस तथा 10 जनवरी विश्व हिन्दी दिवस का भी एक विशेष महत्व है। संपूर्ण विश्व में हिन्दी के प्रचार–प्रसार का अनुकूल वातावरण बनाने के लिए भारत सरकार के विदेश मंत्रालय ने सन् 2006 में यह निर्णय लिया था कि जनवरी का दिन पूरे विश्व में "विश्व हिन्दी दिवस" के रूप में मनाया जाएगा। पिछले सात–आठ वर्षों से भारत में ही नही विदेशों में भी अनेक देशों में रह रहे असंख्य हिन्दी सेवी संस्थाएँ विश्व हिन्दी दिवस का आयोजन करने लगे हैं। भारत सरकार के विश्व व्यापी मिशन एंव दूतावास भी स्वयं अथवा स्थानीय हिन्दी सेवी संस्थाओं के सहयोग से "विश्व हिन्दी दिवस " को बड़ी धूम–धाम से मनाते आ रहे हैं।

विश्व हिन्दी सम्मेलन के आयोजन की कल्पना का मूल आधार उन भावनाओं से अनुप्रकणित होता है जिनके अन्तर्गत महात्मा गांधी ने 1936 में अपनी कर्मस्थली वर्धा में राष्ट्र भाषा प्रचार समिति की स्थापना की थी। विश्व हिन्दी सम्मेलन का इतिहास इस बात का साक्षी है कि यह सम्मेलन जहां–जहां भी हुआ इसमें विदेशियों ने खूब बढ़–चढ़ कर भाग लिया।

प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन 10 जनवरी से 14 जनवरी 1975 तक नागपुर में आयोजित किया गया था। उस समय नागपुर मध्य प्रदेश की राजधानी हुआ करती थी। इस सम्मेलन का आयोजन राष्ट्र भाषा प्रचार समिति वर्धा के तत्वाधान में हुआ था। इस सम्मेलन में 30 देशों के कुल 122 प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन 28 अगस्त से 30 अगस्त 1976 तक मॉरीशस की राजधानी पोर्ट लुई में सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन में 17 देशों के 181 प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

तीसरा विश्व हिन्दी सम्मेलन भारत की राजधानी दिल्ली में 28 अक्टूबर से 30 अक्टूबर 1983 में मनाया गया था।

चौथा विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन 2 दिसम्बर, से 4 दिसम्बर, 1993 तक मॉरीशस की राजधानी पोर्टलुई में आयोजित किया गया। 17 साल बाद मॉरीशस में एक बार फिर विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन किया गया।

पॉचवे विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन त्रिनिदाद एवं टोबेगों की राजधानी पोर्ट ऑफ स्पेन में 4 अप्रैल से 8 अप्रैल 1996 में हुआ। इसकी आयोजन संस्था थी त्रिनीदाद की हिन्दी निधि। इस सम्मेलन का केन्द्रीय विषय था – प्रवासी भारतीय और हिन्दी।

छठवां विश्व हिन्दी सम्मेलन लन्दन में 14 सितम्बर से 18 सितम्बर, 1999 में आयोजित किया गया था। यू०के० हिन्दी समिति गीतांजलि बहुभाषी समुदाय और बर्मिघम भारतीय भाषा संगम पार्क ने मिल जुलकर, इसके लिए राष्ट्रीय आयोजन समिति का गठन किया था। इस सम्मेलन का केन्द्रीय विषय था "हिन्दी और भावी पीढ़ी"।

सातवां विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन सूरीनाम की राजधानी पारामारिबों में 5 जून से 9 जून, 2003 में आयोजित किया गया। इक्कीसवी सदी में आयोजित यह पहला विश्व हिन्दी सम्मेलन था। इस सम्मेलन का विषय था "विश्व हिन्दी नई शताब्दी की चुनौतियाँ"।

आठवां विश्व हिन्दी सम्मेलन 13 जुलाई से 15 जुलाई 2009 तक संयुक्त राज्य अमेरिका की राजधानी न्यूयार्क में हुआ था। इस सम्मेलन का केन्द्रीय विषय था "विश्व मंच पर हिन्दी "।

नौवां हिन्दी सम्मेलन 22 सितम्बर से 24 सितम्बर, 2012 में दक्षिण अफ्रीका के जोहांसबर्ग शहर में हुआ था।

दसवां विश्व हिन्दी सम्मेलन 10 से 12 सितम्बर, 2015 को मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल में सम्पन हुआ। दसवें सम्मेलन का मुख्य विषय " विदेश नीति में हिन्दी" था।

ग्यारहवां विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन 2018 में मॉरीशस में होना तय हुआ हैं।

विश्व स्तर पर हिन्दी प्रवासी भारतीयों की देन है। 9 जनवरी 1915 को महात्मा गांधी दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटे थे। इसलिए भारत सरकार ने 9 जनवरी को प्रवासी भारतीय दिवस मनाने का संकल्प लिया। प्राचीन काल से ही हमारे देश के कोने–कोने से गरीब लोग नौकरी की तलाश में विश्व के अनेक ब्रिटिश गुलाम देशों में चले गये थे। वे जहाँ भी गए, वहीं के होकर रह गये थे। परन्तु उन्होने वहां भी अपनी संस्कृति और सभ्यता को नही छोड़ा।

इक्कीसवीं सदी में भारतवंशी विश्व के विभिन्न देशों में पाये जा सकते हैं। वे जहां भी जिस हाल में हैं अपनी जमीन से आज तक जुडे हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में भारत के विभिन्न क्षेत्रों से भारतीयों को अंग्रेजी सरकार केरेवियन में गन्ने की खेती करवाने के उद्देश्य से ले गई। कूटनीति ने कुछ ऐसा खेल खेला कि वे लोग तथा उनकी संतानें वहीं की हो गई। आज दो सौ वर्षों के अन्तराल में जहां भी भारतीय है आज भी वे अपनी पूर्वजों की संस्कृति से जुडे हैं।

राष्ट्र की वास्तविक पहचान उसके सांस्कृतिक एवं साहित्यिक संस्कार से ही होती है। खान–पान एवं परिधानों से भी राष्ट्र निश्चित जाना जाता है, किन्तु साहित्य एवं संस्कृति दो ही हैं जो असली छाप डालने में समर्थ होती हैं। इन दोनों को जीवित रखने के लिए भाषा का जीवित रहना अनिवार्य है। अतः यह अनिवार्य है कि भारतवासियों की विभिन्न मातृभाषाओं को और अधिक सशक्त बनाया जाए तथा सबका यह नैतिक, धार्मिक, सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक दायित्व होना चाहिए कि वे अपनी मातृभाषाओं में अपने विचारों को कहने एवं लिखित रूप में व्यक्त करने में समर्थ हों।

प्रवासी हिन्दी साहित्य की चर्चा या उसकी अपेक्षाओं की बात करने से पहले उसके ऐतिहासिक परिपेक्ष्य को जानना और समझना आवश्यक होगा, विशेषकर गिरमिटिया पूर्वजों की उन स्थितियों और परिस्थितियों को भी जानें जिनसे वे वर्षों तक जूझते रहे। जिन देशों में भी प्रवासी भारतीय पहुँचे, जैसे कि दक्षिण अफ्रीका, हालैंड, इंग्लैंड, अमेरिका हर जगह घोर परिश्रम, सहनशीलता, तथा संघर्षो से कायापलट करते रहे। इसलिए इन प्रवासियों का साहित्य अपने वर्तमान के साथ अपने भविष्य तथा अतीत की याददाश्त को लेकर चला। अभिव्यक्ति की छटपटाहट के साथ पहले पहल "रामचरित्र मानस" जैसे कुछ ग्रन्थों, मौखिक लोकगीतों और लोक कथाओं का सिलसिला शुरू हुआ, फिर भजन–कीर्तन, तीज–त्योहार रामलीला– नाटक जैसे विभिन्न प्रकार की अभिव्यक्तियों के साथ संस्कृति तथा हिन्दी का प्रचार–प्रसार शुरू हुआ।

प्रवासी हिन्दी साहित्य का प्रमुख स्वर वही है, जो विश्व साहित्य या भारतीय साहित्य का रहा है। प्रवासी हिन्दी साहित्य की चर्चा के दौरान मॉरीशस की अहम भूमिका को याद न करना असम्भव है। मॉरीशस के हिन्दी साहित्य का एक दूसरा कीर्तिमान यह भी है कि फ्रेंच वर्चस्व और अंग्रेजी राजभाषा संरक्षण के बावजूद इस द्वीप में हिन्दी पुस्तकें अंग्रेंजी और फ्रेंच के मिलने पर भी काफी संख्या में छपती रही हैं।

प्रवासी भारतीय छोटे–छोटे समूह में कई देशों में बसे हुए है लेकिन भारत से उनका लगाव कई पीढियों से इस कदर छाया हुआ है कि वे अपनी पुराणों की धरोहर हिन्दी साहित्य का अधिक विकास एवं प्रसार करना ही उनका पहला ध्येय बन चुका है।

प्रवासी हिन्दी लेखक पूरे आत्मविश्वास के साथ हिन्दी में सृजन करते चले आ रहे हैं। वे अपने पूर्वजों की इस भाषाई ऋण को किश्तों में चुका रहे हैं। प्रवासी हिन्दी साहित्य भी असहाय, लाचार तथा शोषित जनों की प्रबल जनवाणी है। यूरोपीय समाज में जहां भारतीय संस्कृति को अपनाया जा रहा है वहीं हमारे मनीषी, शिक्षाविद्, समाजविद् अभी भी इस भाषा के पूर्ण विस्तार के लिए निरन्तर प्रयासरत् है। भाषा हमारी धरोहर है।

आज विश्व भारत की ओर स्फूर्ति दायक देश के रूप में देख रहा है और हम अपने आत्मविश्वास से दूर होते जा रहे हैं, अपनी भाषा से कटते जा रहे हैं। भारतीय बुद्धि की साख विश्व में है, भारतीय संस्कृति यदि खो जाती है तो सारी दुनिया को हानि होगी, इस संघर्ष में सबसे सबल हथियार हिन्दी भाषा का है, उसका प्रयोग कीजिए, इस पर हम सभी को विचार करना है, संकल्पव्रती बनना है।

अब वक्त का तकाजा है कि फ्रेंच भाषी देशों की तरह सभी प्रवासी हिन्दी भाषी भी एक सूत्र में बधें। प्रवासी भारतीयों का भी एक अन्तर्राष्ट्रीय मंच हो और सभी प्रवासी

एक विश्व साहित्यिक शक्ति के रूप में अपने स्वर को विश्वभर में प्रतिध्वनित कर सकें।

आज समूचे विश्व में प्रवासी भारतीय अपनी योग्यता के बल पर अपने देश का नाम रोशन कर रहे हैं। भाषा के लिहाज से पूरा विश्व एक बाजार बन चुका हैं। दिन प्रतिदिन नये – नये उत्पाद बाजार में आ रहे हैं। जिन का प्रभाव स्थानीय बाजारों पर भी तत्काल पड़ता है। ऐसी दशा में विश्व बाजार के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने के लिए हमें प्रवासी भारतीयों के उन अनुभवों की सख्त आवश्कता है जिससे हम देश के विकास में किसी अन्य देश पर निर्भर हुए बिना लक्ष्यों की पूर्ति कर सकें। हमारे प्रवासियों की हिन्दी के प्रति विश्वसनीयता ही हमारी राष्ट्र की शक्ति है।

भारतीय साहित्य स्वर से प्रभावित होकर भी इन प्रवासियों के साहित्य अपनी नई धरती के साथ जुड़े रहे। विश्वभर का हिन्दी साहित्य आज अपने–अपने देश की धाराओं को आत्मसात करके अपने–अपने सत्य को पाठकों के सामने रख रहा है। प्रवासी हिन्दी साहित्य में मॉरीशस का अपना जो निजी स्वर है वह अतीत को आत्मसात् किये हुए भी वर्तमान समस्याओं की ही स्वर बुलंदी है। मॉरीशस का यह सफल प्रयास ही कहा जायेगा जिसने हिन्दी साहित्य के अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप को एक नया आयाम प्रदान किया है।

आज भारत सूचना एवं प्रौद्योगिकी के साथ–साथ भाषा के प्रचार–प्रसार में भी काफी आगे बढ़ गया है। हमारी भाषा, हमारी संस्कृति तथा हमारे संस्कार हमारे देश के करोडों लोगों की ताकत है। पिछले वर्ष विश्व योग दिवस तथा हाल ही में दिल्ली में यमुना के किनारें "श्री श्री रविशंकर" ने 11 मार्च से 13 मार्च 2016 तक तीन दिवसीय विश्व का महासमागम के रुप में अदभुत अविस्मरणीय संस्कृति महोत्सव का आयोजन किया। जिसका मकसद भी हिन्दी भाषा को विश्व स्तर तक प्रदर्शित कर भारत को एक हिन्दी राष्ट्र की पहचान दिलाने का रहा है। इस महोत्सव में देश और दुनिया के हजारों कलाकारों ने अपनी–अपनी प्रस्तुतियों से लोगों का मन ही नही मोहा बल्कि हमारे देश की सभ्यता और संस्कृति का भी खूब प्रचार–प्रसार भी किया। विश्व के 155 देशों के कई हजार कलाकारों ने इसमें भाग ही नही लिया बल्कि हमारे देश की रीति–रिवाज तथा खान–पान का भी खूब स्वाद लिया। जिससे यह प्रतीत हुआ कि भारत की संस्कृति में विभिन्नता में एकता है। इस प्रयास को विश्व के देशों के सभी कलाकारों ने खूब सराहा।

स्वतन्त्रता से पूर्व तथा पश्चात भी विश्व के अनेकों विद्वानों, तीर्थ यात्रियों ने हमारे देश की भाषा और संस्कृति का अध्ययन करके अपने देश में इसका खूब प्रचार–प्रसार किया इतिहास जिसका साक्षी है। उन्होंने हमारे देश के कई ग्रन्थों तथा ज्ञानमयी पुस्तकों का अपनी भाषा में अनुवाद कर इसका खूब प्रचार–प्रसार किया। इस प्रकार प्रचार–प्रसार से हिन्दी का विस्तार तो हुआ ही बल्कि इसकी मिठास से सभी देश भी भली भॉति परिचित हो चुके हैं। यही हमारे देश के सवा सौ करोड़ वासियों के लिए बड़े ही गौरव की बात है।

गुब्बारे वाला

मंजु पंत
वा.हि.भूवि.संस्थान, देहरादून

मैं और मेरी लेखनी बैठे हुए थे अपने बरामदे की गुनगुनी धूप में। बच्चों की कोई मैगजीन पढ़ रहे थे एक दूसरे के गलबहियाँ डाले हुए। पढ़ते–पढ़ते लगा मैगजीन में कोई बच्चों के चित्र नहीं बल्कि हमारे ही चित्र हैं। सब गड्ड–मड्ड होने लगा। कहानियों– कविताओं के उन पात्रों की जगह हम खुद ही सामने आने लगे थे उनमें। कहानियाँ, कविताएं तो कहीं खो सी गई थीं और जीवन में बहुत पीछे के दृश्य उन कहानी, कविताओं में घूमने लगे। नदी–पहाड़, खेत–खलिहान, पेड़–पौधे, हरियाली, चांद–तारे, सूरज, हिमाच्छादित पर्वत श्रृंखलाएं, उनमें पड़ती उगते व ढलते सूरज की किरणों की वजह से झिलमिलाती बर्फीली चांदी सी चोटियां। कुछ नन्हे–नन्हे से साथी, कुछ बांसुरी की तानें। मैंने और लेखनी ने एक दूसरे की पनीली आंखों में चुपके से देखा। दोनों ही खोए–खोए से थे। कुछ मोती आंखों से टपक पड़े ये सोचते हुए कि जीवन में क्या खोया क्या पाया? पीछे दूर बहुत दूर तक चले गए हम दोनों ही। लगा क्यों वक्त इतनी जल्दी बीत गया? क्यों सब कुछ पीछे छूटता चला गया। क्यों बहुत सारे लोग हमसे बिछुड़ गए, जो हमारे बहुत प्रिय थे, जिनके बिना जीवन बड़ा कठिन था। वो नदी, पहाड़, खेत, खलिहान, चांदी सी चमकती पर्वत श्रेणियां कहां गईं? हम दोनों चुपचाप आंखें मूंद एक दूसरे का हाथ थामे अनायास ही आकलन करने लगे अपने जीवन का। लगा क्या हम ही ऐसा सोचते हैं कि और लोग भी ऐसा ही सोचते होंगे? हम क्या ज्यादा ही भावुक तो नहीं हो जाते बीते जीवन की यादों से। कहीं ऐसा तो नहीं कि हम आम जीवन से ज्यादा ही लगाव रखते हैं। तभी लेखनी ने मुझे हिलाया, याद दिलाया उन लोगों की प्रतिक्रियाओं का जो 'अश्मिका' में हमारा लेख पढ़कर लोग हमें देते हैं। अरे हां मुझे भी याद आ गया कि लोग कई तरह की प्रतिक्रियाएं व्यक्त करते हैं– कि हम भी कहीं खो गए, कि हमें भी ऐसा ही लगता है, कि हम भी उस जगह रुककर अपने बच्चे के स्कूल को देखने लगे, ऐसी ही बहुत कुछ प्रतिक्रियाएं जिन्हें सुनकर हमें भी अच्छा लगता है। आपकी यही प्रतिकियाएं हमें फिर से लिखने के लिए प्रेरित करती हैं। हम उठ खड़े हुए आंखें और नाक साफ की। इसमें हंसने की क्या बात है? क्या आंसुओं के साथ नाक नहीं बहती? आपकी भी बहती होगी हा–हा–हा। वैसे आप पता नहीं इसको कैसे लेते हैं पर हम दोनों ही मानते हैं कि आंख–नाक से भावनाएं ही बहती हैं। हाँ तो हमने मुंह धोया और तैयार हो गए। अचानक साहस आ गया आपकी प्रतिक्रियाओं को याद करके हमारे अंदर, फिर से उसी जीवन के अन्दर गुम हो जाने का, मीलों पीछे की लम्बी यात्रा करने का और आप सभी को भी उन मीलों लम्बी यात्रा में अपने साथ गुम करने का।

तो क्या खयाल है आपका? चलेंगे हमारे साथ अपने वर्तमान और भविष्य की चिन्ताओं और योजनाओं को कुछ समय के लिए छोड़कर, भूलकर तरोताजा होने के लिए, ताकि हम दोगुने उत्साह से अपने कर्तव्यों को अंजाम दे सकें। अपने वर्तमान की चिन्ताओं का साहस के साथ सामना कर सकें। अपने भविष्य के सपनों को नए रंग से सजा पाएं। तो चलिए चलते हैं एक नए–पुराने सफर पर नई–पुरानी सोच के साथ। वर्तमान की घटना से शुरु कर जिन्दगी की पगडन्डी पर पीछे दूर बहुत दूर जाने के लिए, हम तैयार हैं आपकी उंगली थामे।

वो 31 दिसम्बर की शाम थी। ऑफिस से घर आते हुए काफी देर हो गई थी। सर्दियों के दिन होने की वजह से अंधेरा हो गया था। हलका सा कोहरा भी लगा था। ओस की हलकी सी बारिश सी हो रही थी। इतना होने पर भी सड़क में दूसरी ओर जाते हुए गैस के गुब्बारे वाला हमें दिख ही गया। हमारे अन्दर छिपे बच्चे की आंखें तेज थीं। उस बच्चे को कैसे नहीं दिखता कि सड़क के उस पार उसकी खुशी जा रही है गैस के गुब्बारे वाले के रुप में। लेखनी और भी दो कदम आगे थी बस फिर क्या था। हमने आवाज देकर रोक लिया उसे भैय्या....."रुको"....। पैर में दर्द भी हो रहा था फिर भी हमने दौड़ लगा दी उसे रोकने के लिए। सड़क पार कर चले गए उसके पास। उससे कहा आपके पास जितने भी रंग के गुब्बारे हैं सब तैयार कर दे। वो बोला मैडम जी गैस खत्म हो गई है। 15 मिनट लगेंगे तैयार करने में। हमने बोला कोई बात नहीं।

आप गैस तैयार करो, हम इन्तजार करेंगे। उसके बाद उसने गैस तैयार की और जितने भी रंग के गुब्बारे उसके पास थे सारे तैयार कर दिए और एक अपनी तरफ से भी दिया। बहुत कहने पर भी उसने एक गुब्बारे के पैसे नहीं लिए। उसने कहा ये तो हम खुश होकर दे रहे आपको। घर जाते समय आप भी तो खुशी दी हो हमको इतने सारे गुब्बारे खरीदकर इसीलिए हम भी आपको दे रहे थोड़ी सी खुशी। हम दोनों उसकी बात सुनकर हैरान हो उसे देखने लगे। भले ही एक गुब्बारा हम सबके लिए कोई महत्व न रखता हो, पर उसने कितनी बड़ी बात कह दी। उसके चहरे पर बड़ी सौम्य सी मुस्कान थी। हमने उसके बाकी के पैसे दे दिए। वो भी बहुत खुश कि किसी ने घर जाते समय उससे इतने सारे गुब्बारे लिए और हम भी बहुत खुश उस गुब्बारे वाले की खुशी देखकर, अपने हाथ में इतने सारे गुब्बारे पकड़कर और एक गुब्बारा इनाम में पाकर। हमें ये इनाम ही लगा। जो आदमी दिन भर में पता नहीं कितनी कमाई कर पाता होगा। वैसे भी आज का समय गैस के गुब्बारे से खेलने का कहां रहा। उसने दिल बड़ा करके, खुश होकर एक गुब्बारा हमें इनाम में दे दिया। उसके चेहरे पर बहुत खुशी थी एक गुब्बारा हमें अधिक देते हुए जब उसने कहा एक मेरी तरफ से। उसके बड़प्पन का सम्मान करते हुए हम आगे चल पड़े। लगा जरुर आगे और भी खुशियां खड़ी होंगी हमारे लिए बाँहें पसारे। हालांकि हमारी स्थिति ऐसा सोच पाने की नहीं थी, फिर भी हमने सोचा ऐसा सोचने में कोई हर्ज भी तो नहीं है। हां तो गुब्बारों को कसकर उंगली में लपेट कर संभालते हुए आगे चले। रास्ते में जो भी जान पहचान वाले या अनजान भी मिले तो आंखें फाड़कर, मुस्कराकर और पीछे मुड़–मुड़ कर कभी हमें और कभी ऊपर उड़ते हुए हमारे गुब्बारों को देख रहे थे। सड़क पर चलते हुए गुब्बारों के साथ हमने मोबाइल से फोटो खींच कर बेटी के लिए भेज दी। तुरन्त उसका मैसेज आ गया कि ऐसा लग रहा है जैसे विदेश की सड़क पर घूम रहे हो। वाह क्या प्रतिक्रिया थी। हम भी खुश हो गए। हमें भी फील गुड का अहसास हुआ। घर पहुंचे, माँ बीमार थीं। गुब्बारे उनके हाथ में पकड़ा दिए। बाबा को भी बुला लिया। इतने में भाई भी आ गया। उनके चेहरों पर जो खुशी दिखाई दी उसे शब्द देना मुश्किल है। वो उनको हाथ में पकड़ कर कभी नीचे कभी ऊपर करते। कभी उन पर हाथ मारते और खूब खुश होते। शायद उनके अन्दर का बच्चा भी उन गुब्बारों को देखकर सुकून महसूस कर रहा था। उसके बाद जो भी हमारे घर आया उसके चेहरे पर उन गुब्बारों को देखकर निश्छल सी हंसी और आनंद छा जाता था। वो कुछ देर के लिए उन गुब्बारों से खेलने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहा था। हर किसी की प्रतिक्रिया थी अरे! गुब्बारे....", कितने रंग बिरंगे गुब्बारे हैं! अरे वाह गुब्बारे। वा...उ..."गुब्बारे"... इसी तरह की प्रतिक्रियाएं। तो देखा आपने गुब्बारा एक बहुत छोटी सी चीज है। शायद आप लोगों की नजर में इसका कोई मोल ना हो, लेकिन उस छोटी सी चीज ने अनायास ही कितने सारे लोगों को खुशियां दे दी, कितनों के चेहरे पर मुस्कान ला दी। यानि हम मानते हैं कि हर चीज का अपना महत्व है। भौतिकवाद के इस युग में हम न जाने कहां खोते जा रहे हैं। जीवन की नन्हीं–नन्हीं खुशियों से, नन्हें–नन्हें अनुभवों से कहीं दूर टीवी, मोबाइल, कम्प्यूटर की दुनियां में खोए हुए।

हमने ऊपर बहुत कुछ लिख तो दिया पर आपसे ये पूछना भूल गए कि क्या आपको याद है कि अपने बचपन में आपने गैस के रंग बिरंगे गुब्बारे या रंग बिरंगी पतंग को आसमान में उड़ते देखा होगा। अपनी मनपंसद पतंग को आसमान में उड़ते देखकर आपका मन भी जरुर किया होगा पतंग की डोर पकड़ कर उसी के साथ बल खाकर, लहराकर आसमान की उंचाइयों को छूने का। क्या पता आपने भी हमारी तरह कभी कोशिश भी की हो कूद–फांद कर आसमान में चढ़ने की, उसे छूने की। अपने गैस के गुब्बारे को आंखों से ओझल होने तक देखने की। यही स्मृतियां तो हैं जो गाहे–बगाहे चली आती हैं। हमें उदास करने, किसी भी याद में सराबोर करने, आंसू बहाने, कुछ खोए हुओं को याद कराने। पर स्मृतियाँ इसलिए भी चुपके से चली आती हैं कि हम किसी अपने को याद करके हंसें, कुछ ऐसी घटनाओं को याद दिलाने कि हमारे चेहरे पर स्वतः ही मुस्कान आ जाए। स्मृतियां उस एक बाए तारा भुर–भुर तारा, दो तारा भुर–भुर तारा, तीन–चार–पांच .... तारा भुर–भुर तारा की तरह हैं, तारे जो हमारे बिछुड़े हुओं की पहचान हैं। उस कोयल की कूक की तरह हैं जो अपनी और हमसे हमारी पहचान पूछने और बताने का प्रयास करती है। उस आलसी कौए और मेहनती गिलहरी की तरह हैं, जो तू चल मैं आता हूँ, चुपड़ी रोटी खाता हूं ठंडा पानी पीता हूँ, हरी डाल पर बैठा हूं बोलता था पर करता कुछ नही था। उस कछुवे और खरगोश की दौड़ की तरह हैं, उस बुद्धिमान प्यासे कौए की तरह हैं, जो घड़े में कंकड़ डालकर पानी पी लेता था। अरे हां एक मजे की बात

बताएं आपको–हम अश्मिका के लिए ही लिख रहे थे। इतने में देखा कि हमारी लेखनी के ऊपर एक पास फेल वाला पीला और काले डॉट्स वाला कीड़ा चल रहा है। लेखनी ने इशारा किया। हमारी आंखें चमक उठीं। मैंने उसे अपनी उंगली में लिया और हम दोनों बाहर चल पड़े और पास–फेल, पास–फेल करके उसे उड़ाया। खिलखिलाकर हंस पड़े । फिर से वहीं आनंद आया जो कभी बचपन में आता था। स्मृतियां इसी धुंटू कीड़े, लिली बर्ड या पास फेल वाले कीड़े आप जो भी बोलते होंगे, की तरह भी होती हैं। जो फेल में उड़ता तो उदासी और पास में उड़ता तो हंसी दे जाता था। कुछ याद आया आपको कुछ भूला–बिसरा सा कुछ उदास सा या कुछ खुशियों भरा।

हमें जब भी फुरसत मिलती है तो हम दोनों ही या तो कोई मैगजीन पढ़ना पसंद करते हैं या फिर कोई मनपसंद काम करना, जिसे हम बेफुरसती की वजह से नहीं कर पाते या फिर कुछ पल के लिए बहुत सारे वक्त को लांघकर पीछे लौट जाते हैं आंखें बन्द करके। हम जानते हैं इससे कुछ हासिल नहीं होगा। पर आपको बताएं इससे हम थोड़ी देर के लिए सब चिंताओं से मुक्त हो जाते हैं। देखिए मेरी लेखनी आपकी ओर इशारा करके विभिन्न प्रकार की भाव भंगिमाएं बना रही है आपके चेहरों को देखकर। भले ही आप हमारे सामने नहीं हैं पर हम अपनी मानसिक यात्रा में आपका चेहरा और भंगिमाएं देख पा रहे हैं। उदासी वाली भंगिमा, डरने–चौंकने, रोने–हंसने, मुस्कुराने वाली भंगिमा। अरे घबराइये मत। कोई बात नहीं हम दोनों की भंगिमाएं भी ऐसी ही हो रही हैं। ये मानसिक यात्रा आपकी अपनी है बहुत निजी। आप जानते या मानते होंगे हम सभी दिन भर में कभी न कभी भगवान जी को भी मानसिक रुप से याद करते हैं। हर समय पूजा ही तो नहीं करते, ना ही दिया जलाते हैं, पर याद मन ही मन में करते ही हैं। ये मानसिक रुप से याद करना ही तो है। ये वक्त से बहुत पीछे लौटने की हमारी मानसिक यात्रा भी तो भगवान जी को याद करने के बराबर ही तो है न। जो हमें कुछ पलों के लिए हर दुखों, उदासियों, चिन्ताओं को भुलाकर उस दुनियां में ले जाती है जिससे हम मन ही मन मुस्कुरा उठते हैं। एकदम तरोताजा हो उठते हैं भविष्य की लम्बी पथरीली या फिर समतल सड़क पर चलने के लिए।

वैसे तो हमारे इस लेख का नाम स्मृतियां होना चाहिए था। क्योंकि इस बार कुछ पुरानी खट्टी मीठी स्मृतियों में ही गोता लगाकर आए हैं। पर क्योंकि दरअसल उस गुब्बारे वाले की वजह से ही हमें स्मृतियों में डूबने उतरने का अवसर मिला। तो इसका श्रेय और सम्मान तो उस गुब्बारे वाले को मिलना ही चाहिए, जिसने हमें इतनी ढेर सारी खुशियाँ दी। कुछ पल के लिए ही सही। आज भी हमें उसका चेहरा याद है और उसकी खुशी और मुस्कान भी। देखिए मेरी लेखनी मुस्कुरा रही है। शायद बचपन की कोई लाल, हरी, पीली, नीली, बैंगनी स्मृति, गुब्बारे के समान उड़ती हुई आ गई हो उसके जेहन में। अच्छा अब विदा। अगले वर्ष कुछ खट्टी मीठी स्मृतियों में डूबने उतराने के लिए फिर आपसे मिलेंगे।

देव भूमि दर्शन

अमर देव बहुगुणा
महासर्वेक्षक का कार्यालय, भारतीय सर्वेक्षण विभाग, देहरादून

एक संस्कृति जिसमें सहाचरण के लिये आदर्श राम हैं, मर्यादित आचरण के आदर्श घनश्याम हैं, जिसमें युद्ध विभीषिका रोकने के आदर्श महात्मा बुद्ध हैं, मानवता की पीर हरने के लिये महावीर हैं, भ्रातृत्व भरने के लिये जहॉ भरत रूपी बोध हों मानवता हित के लिये जहॉ अनवरत होते शोध हों, ऐसी संस्कृति जो सबसे पुरातन हो जो सत्य सनातन हो, ऐसी संस्कृति जो मानवीय मूल्यों से ओतप्रोत हो। ऐसी संस्कृति की उर्जा का जो स्रोत है, ऐसे पुण्य प्रदेश के लिये लिखा गया यह स्त्रोत्र है। प्राकृतिक दृष्टि से ऐसा प्रदेश जो अत्यन्त रमणीय है। पर्यटन की जहॉ अपार सम्भावनायें हैं जिसके कारण यह भ्रमणीय है। जहॉ सनातन संस्कृति से जुडे हुए प्रसिद्ध तीर्थ स्थल हैं। जहॉ नदियॉ कल–कल करती बहती सदैव निश्छल हैं। जहॉ से ऋद्धि सिद्धि और सद्बुद्धि की त्रिवेणी निकलती है। जिसके कारण ही तो आदरणीय प्रदेश है। ऐसे प्रदेश के गीत रूपी स्तुति के माध्यम से प्रदेश की झॉकी दिखाने का प्रयास है। जिसका एक बार भी यदि कोई पाठ कर ले तो वह बरबस ही ऐसे प्रदेश में पहुॅचने के लिये आतुर हो जायेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

हे जननी! हे जन्म भूमि! तुझको, शत्–शत् बार नमन्,
जय–जय उत्तराखण्ड।

तेरे चार धाम हैं ख्याति नाम, देते भव मुक्ति उपदेश,
गंगा यमुना, और सरस्वती, देती जीवन का सन्देश,
सभी सुखी हों तन मन धन से, नीति और यही है धरम।
हे जननी... |1|

भारत मॉ का भाल तू ही है, हनुमान, भरत का ननिहाल तू ही है,
देव तुल्य संस्कृति है तेरी, समृद्ध बडी खुशहाल रही है,
पुराण और वेद–ऋचाओं का, तुझसे ही होता उद्‌गम्।
हे जननी .... |2|

तेरी हर बेटी नन्दा, गौरा, दुर्गा, वीर भड़ो का देश (तू ही है),
नागर्जा की धरती है तू, बावन गढ़ों का प्रदेश (तू ही है),
कालिदास की जन्म भूमि तू, ज्ञान भक्ति का सुर संगम।
हे जननी... |3|

हर सैनिक तेरा वीरभद्र है, जिसका इतिहास बडा बलशाली,
नही झुका कभी अटल हिमालय, गाथा जिसकी गौरवशाली,
बल–बुद्धि का मेल है ऐसा, जहॉं दक्ष भी होते शिव शरणम्।
हे जननी... |4|

तेरी कोख से ही मॉ जन्मे गबर, पन्त मणी, चन्द्र सुमन,
तेरा वैभव बना रहे मॉ वसुधा हो ज्यों कुटुम्बकम्।
हे जननी... |5|

हे महासू! बद्री–केदार जागेश्वर, हेमकुण्ड! पिराने कलियर,
यहॉ एकेश्वरता, प्रेम मधुरता, रमा है कण–कण में भुवनेश्वर,
तू अमर तपस्वियों की भू जिसका, फैल रहा जग में परचम।
हे जननी... |6|

देव भूमि दर्शन में प्रयुक्त किये गये कुछ शब्दों के अर्थः

सभी सुखी हों– सर्वे भवन्तु सुखिनः,

हनुमान का ननिहाल– महर्षि गौतम का आश्रम, चन्द्रबनी, देहरादून,

भरत का ननिहाल– कण्व आश्रम कोटद्वार,

पुराण, वेद–ऋचाओं का उद्गम स्थान (बद्रीनाथ से एक किमी आगे ब्यास गुफा),

नागजी की धरती– सेम–मुखेम, लमगांव, टिहरी गढ़वाल,

कालीदास की जन्मभूमि– कालीमठ रूद्रप्रयाग,

दक्ष– ज्ञानी जन, दक्ष प्रजापति, कनखल हरिद्वार स्थित प्रसिद्ध मन्दिर,

वीर भद्र– आदरणीय सैनिक, भगवान शिव का परम भक्त गण,

गबर– विक्टोरिया क्रास विजेता वीर गबर सिंह,

पन्त– सुमित्रा नन्दन पन्त, गोविन्द बल्लभ पन्त,

मणी– इन्द्रमणि बडुनी,

चन्द्र– चन्द्र सिंह गढवाली,

सुमन– अमर शहीद श्री देव सुमन,

वसुधा ज्यों हो कुटुम्बकम्– वसुधैव कुटुम्बकम्,

महासू– जौनसार स्थित प्रसिद्ध देव स्थल,

जागेश्वर– जागेश्वर महादेव अल्मोड़ा,

रमा है– व्याप्त है,

भुवनेश्वर– समस्त भूमण्डल के ईश्वर, पाताल भुवनेवर, गंगोलीहाट, पिथौरागढ़,

पिराने कलियर– पिरान कलियर, रूडकी, हरिद्वार,

एकेश्वर– ईश्वर की एकरूपता, एकेश्वर महादेव पौडी गढवाल,

स्मृतियों में कैद लम्हे : यात्रा–संस्मरण

विद्या सिंह
एम.के.पी. कॉलेज, देहरादून

पर्यटन जीवन के सबसे सुखद अनुभवों में से एक है। तभी तो इस्माइल मेरठी ने कहा है, 'सैर कर दुनिया की गाफ़िल जिन्दगानी फिर कहाँ? जिन्दगी ग़र कुछ रही तो नौजवानी फिर कहाँ?' मेरी सम्मति में नौजवानी से यहाँ आशय स्वास्थ्य, स्फूर्त्ति एवं उमंग से लेना होगा क्योंकि शरीर से नौजवान बने रहना तो किसी के लिए संभव नहीं है। यदि इन्सान में उपरोक्त तीन नेमतें हैं तो पढ़ने की तरह घूमने की भी कोई उम्र नहीं होती। देश–दुनिया के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए यायावरी का अन्य कोई विकल्प नहीं है। प्राचीन समय में लोगों के पास विद्यालयी शिक्षा नहीं होती थी किन्तु उन्हें दूर दराज के लोगों के रहन–सहन, रीति–रिवाज की खूब जानकारी होती थी। धार्मिक पर्यटन, मेले–ठेले की इसमें बड़ी भूमिका होती थी। घुमक्कड़ी हमारे अनेक साहित्यकारों के जीवन का अभिन्न अंग रहा है। राहुल सांकृत्यायन, नागार्जुन अपनी यायावरी वृत्ति के लिए भी जाने जाते हैं। 'घुमक्कड़ शास्त्र' तथा 'अथातो घुमक्कड़ जिज्ञासा' प्रवृति पुस्तकें दर्शाती हैं कि नये नये स्थानों को देखने की, नये लोगों की जीवनचर्या के विषय में जानने की स्वाभाविक जिज्ञासा मनुष्य के स्वभाव में होती है।

यातायात के आधुनिकतम साधनों तथा संचार–क्रान्ति ने वर्तमान में दूरियाँ मिटा दी हैं। एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना पहले इतना सुगम कभी नहीं था। आज बिना शारीरिक कष्ट उठाए हम भ्रमण कर सकते हैं। घूमने–फिरने से हम तरोताज़ा तो होते ही हैं, वापस अपने काम में दुगुनी ऊर्जा से लगते हैं। जीवन की एकरसता टूटने से भीतर से उत्साह का संचार होता है। इसी विचार से प्रेरित हो कर अवसर मिलने पर मैं प्रायः भ्रमण की योजना बना लेती हूँ। सन् 2014 के ग्रीष्मावकाश में जब बेटियों ने मुझे आमंत्रित किया तो मैं उनका आग्रह टाल न सकी। 12 जून को कॉलेज बन्द हुआ और मैं 13 जून की रात में 'लुफ्तांशा एयरवेज़' के हवाई जहाज में अमेरिका के लिए बैठ गई। दो घंटे का विश्राम जर्मनी के फ्रैंकफ़र्ट हवाई अड्डे पर था। एयरपोर्ट की भीतरी सजावट देख कर मन मुग्ध हो गया। विशेषकर सीलिंग से लटकता हुआ जहाज देख कर अमेरिका के नासा म्यूज़ियम की याद हो आई। वहाँ मैंने कैमरे से कुछ तस्वीरें भी लीं।

तेरह जून को चल कर लगभग उन्नीस घंटे की यात्रा के बाद मैं तेरह जून को ही अमेरिका पहुँच गई। उनका समय हमसे काफ़ी पीछे है। बेटी ने घूमने की योजना पहले से ही बना ली थी। देखे गए उन स्थानों में कुछ तो स्थाई रूप से मेरे ज़ेहन में बस गए हैं। इंटरनेट खोजने पर हैरानी हुई, उनके बारे में वहाँ विस्तार से जानकारी दी गई है। उनकी सहायता मैंने इस लेख के लिए ली है।

घूमने के क्रम में सबसे पहला कार्यक्रम 'लांगवुड्स गार्डेन' का था। पेनसिलवेनिया राज्य में 4.2 वर्ग किमी में फैला हुआ यह एक विशाल बॉटनिकल गार्डेन है। बाग की सामान्य परिकल्पना से पर्याप्त भिन्न। यह एक बाग नहीं अपितु कई ऐसे बागों का समूह है जो फूलों, वनस्पतियों, वृक्षों की भिन्न भिन्न नयनाभिराम दृश्यावलियाँ उपस्थित करता है। कहीं मनमोहक फूलों से भरी क्यारियाँ हैं तो कहीं फव्वारों के साथ खूबसूरत पौधों की कतार। चिड़ियों को निहारने के लिए ट्री हाउस है तो सुस्ताने के लिए फूलों के बाड़ से घिरी बेंचें हैं। एक बड़े से बोर्ड पर दर्शकों की सुविधा के लिए पूरे बाग का नक्शा बना हुआ है।

इसके निर्माता पियरे डु पॉन्ट का जन्म 1870 में हुआ था। बचपन में वह अपने आस–पास की प्रकृति से प्रभावित

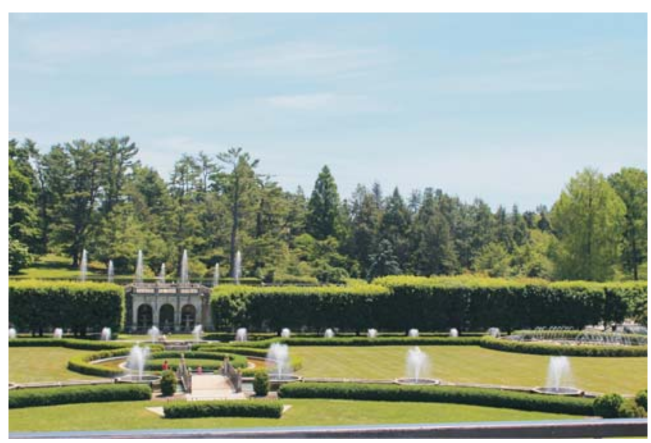

हुआ। पेशे से उद्योगपति पॉन्ट ने अपना शौक पूरा करने के लिए 1906 में जमीन खरीदी और 1907 में 600 फीट लंबा 'फ्लावर गार्डेन वॉक' बनाया जो आज बाग का महत्त्वपूर्ण भाग है। 1916 में उसने कन्ज़र्वेटरी, जिसमें पौधों को अत्यधिक धूप, शीत अथवा वर्षा से बचाया जा सके, बनाया और 1921 में उसे जनता के लिए खोल दिया। 1925 से 1927 में उसने इटालियन वॉटर गार्डेन बनाया। बाग के उत्तर–पूर्व में स्थित दलदली जमीन में फव्वारे लगाए। आज का 'लांगवुड गार्डेन्स' उस जमीन से कोई साम्य नहीं रखता जो 1905 में उसने खरीदी थी। इसके रखरखाव का वार्षिक व्यय 50 मिलियन डॉलर है तथा तेरह सौ कर्मचारी, विद्यार्थी तथा स्वैच्छिक कार्यकर्ता इसकी देखभाल में लगे हैं। सन् 1954 में फ्रांस द्वारा सम्मान प्राप्त करने के तीन दिन बाद चौरासी वर्ष की उम्र में पियरे की मृत्यु हो गई। अपनी दूरदर्शिता से उसने ऐसी योजना बनाई थी कि भविष्य में इस बाग की देखभाल बनी रहे।

हमारा अगला टूर था नियाग्रा का। 'नियाग्रा फॉल्स स्टेट पार्क' उत्तरी अमेरिका का सबसे प्राचीन स्टेट पार्क है। यहाँ से बोट में बैठ कर विश्व प्रसिद्ध नियाग्रा प्रपात, जो प्रति सेकण्ड 750,000 गैलन पानी छोड़ता है, देखने की व्यवस्था है। तीन विशाल प्रपातों के समूह को सामूहिक रूप से यह नाम दिया गया है। दक्षिण अफ्रीका के विक्टोरिया फॉल के बाद यह दुनिया का सबसे बड़ा प्रपात है। प्रतिवर्ष बारह मिलियन दर्शक इसे देखने आते हैं। यहाँ जल और जमीन एक दूसरे से लुका छिपी खेलते प्रतीत होते हैं। छोटे–छोटे जमीन के टुकड़े, उन पर उगी रंग बिरंगी वनस्पतियाँ स्वच्छ जल के दर्पण में जब अपना प्रतिबिम्ब निहारती हैं तो रंगों के सम्मोहन में दर्शक अपने आप को

भूल जाता है। उस पर सफेद बत्तख जैसी चिड़ियों की कतार सोने में सुहागे का काम करती हैं। जहाँ से मोटरबोट मिलती है उस स्थान को प्रॉस्पेक्ट प्वाइंट कहते हैं। 'अमेरिका फॉल्स', 'ब्राइडल वेल फॉल्स' तथा 'हॉर्स शू' अथवा 'कनाडियन फॉल्स' अलग अलग द्वीपों के मध्य में गिरते हैं। 'लूना आइलैण्ड', 'गोट आइलैण्ड', 'ब्रदर आइलैण्ड', 'थ्री सिस्टर्स आइलैण्ड' आदि यहाँ के कुछ द्वीपों के नाम हैं। अमेरिका तथा कनाडा की सीमा पर स्थित 'नियाग्रा फॉल्स' का एक तिहाई भाग अमेरिका में तथा दो तिहाई कनाडा में है। नियाग्रा नदी दोनों देशों के बीच में हो कर बहती है। 'रेन बो पुल' दोनों देशों को जोड़ता है किन्तु कनाडा के वीसा के बिना वहाँ से नहीं जाया जा सकता। दोनो देशों के पर्यटकों के पोचू, जो पानी से भीगने से बचने के लिए उन्हें दिए जाते हैं, उनका रंग अलग अलग होता है जिससे पहचाना जा सके कि कौन सी फेरी किस देश की है।

प्रति शुक्रवार वहाँ आतिशबाजी होती है। संयोगवश जिस दिन हम नियाग्रा फॉल्स देखने जा रहे थे शुक्रवार ही था। घर से निकलने में देर हो गई थी, अतः मेरे जामाता गाड़ी की गति बढ़ा कर समय की भरपाई कर रहे थे। चिकनी सड़क पर गाड़ी की गति का आभास भी नहीं हो रहा था। अचानक उन्होंने गाड़ी किनारे लगा कर रोक दी। अभी मेरे कुछ समझ में आता कि सफेद वर्दी में लंबा, तगड़ा, स्मार्ट पुलिस का आदमी बगल में आ कर खड़ा हो गया। उसने बताया कि वह निर्धारित गति से तेज़ गाड़ी चला रहे हैं, इसी लिए पुलिस को उन्हें रोकना पड़ा। मेरे जामाता ने अत्यंत विनम्रतापूर्वक गाड़ी तेज़ गति से चलाने का कारण बताया। उसने गाड़ी के कागज़ माँगे और पीछे ले गया जहाँ गाड़ी में संभवतः कोई बड़ा अधिकारी बैठा था। वापस आ कर उसने कागज़ इस चेतावनी के साथ लौटाए कि आइन्दा गति का ध्यान रखें। एक बार को सब सकते में आ गए थे किन्तु सब ठीक हो गया।

अन्ततः आतिशबाजी के समय तक हम नियाग्रा पहुँच गए। बड़ी संख्या में लोग वह दृश्य देखने के लिए उमड़ पड़े थे। अमेरिका के सार्वजनिक स्थलों पर होने वाली भीड़ के मुकाबले वहाँ काफ़ी बड़ी संख्या में लोग उपस्थित थे। इससे उस स्थान की लोकप्रियता का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता था। जिस समय आतिशबाजी शुरू हुई उपस्थित जन समूह में हर्ष की लहर फैल गई। विभिन्न रंगों

में सराबोर प्रपात का दृश्य आज भी मेरी स्मृति में विद्यमान है। एक भारतीय सज्जन अपने साथियों के साथ अमेरिका भ्रमण पर आए थे। हमें भारतीय पहचान कर वह स्वयं हमारे निकट आ गए थे। अगले दिन नीला पोचू पहन कर, मोटरबोट द्वारा हम प्रपात के निकट तक गए। हम डेक पर रेलिंग पकड़ कर खड़े थे, प्रपात के नज़दीक पहुँचने पर लगा फेरी कोहरे में समा गई है। पानी की बूँदों की बौछार लगातार ऊपर गिर रही थी और सामने का कुछ भी नज़र नहीं आ रहा था। अगले दिन हमने दूसरा प्रपात देखा। बरसात में जैसे इन्द्रधनुष, हूबहू वैसा ही दृश्य प्रपात के निकट बन रहा था। हमने वहाँ दो रातें व्यतीत कीं और लौटते समय पिट्सबर्ग में दक्षिण भारतीयों के मन्दिर का दर्शन किया। वहाँ टोकन खरीद कर चाय, कॉफ़ी, इडली, दही – चावल आदि खाद्य पदार्थ आराम से बैठ कर खाने के लिए कुर्सी मेज लगे थे। स्वच्छता के साथ बने भारतीय शाकाहारी व्यंजन खा कर अत्यन्त तृप्ति मिली।

हमारी अगली यात्रा न्यूयार्क की थी। ऑसबर्न, वर्जीनिया से पाँच घंटे के सफर के बाद हम न्यूयार्क में थे। गाड़ी पार्क करने के बाद बेटी ने टिकट लिया और हम फेरी के लिए लाइन में लग गए। धूप तेज़ होने के कारण प्रतीक्षा करना कष्टप्रद लग रहा था। थोड़ी देर में बोट आई और हम समुद्र की लहरों पर सवार हुए। दुनिया के सात आश्चर्यों में शुमार 'स्टेचू ऑफ लिबर्टी' आज देख सकूँगी, सोच–सोच कर मन आह्लादित हो रहा था। 'स्टेचू ऑफ लिबर्टी' से पहले बोट हमें एलिस द्वीप पर ले गई। वहाँ एक बड़ा सा संग्रहालय था जिसमें बड़े–बड़े चित्रों के माध्यम से अमेरिका के बसने की कहानी दर्शायी गई थी। लगभग एक घंटा वहाँ रुकने के बाद हम लिबर्टी द्वीप के लिए दुबारा बोट में बैठ गए।

मूर्ति बहुत ऊँची होने के कारण दूर से ही दिखने लगी थी और बोट में बैठे पर्यटकों में हलचल व्याप्त हो गई। लगभग सभी यात्री अपने–अपने स्थान पर खड़े हो गए थे और अब फोटो खींचने में लीन हो गए थे। नाव तट से लगी तो सभी यात्री उतर गए। एक बड़े से दूरबीन के स्लॉट में सिक्का डाल कर उससे देखने पर मुख्य भूमि पर बने न्यूयॉर्क के स्काईस्क्रेपर्स तथा हार्बर बहुत निकट प्रतीत होते थे।

'स्टेचू ऑफ लिबर्टी' फ्रांस के नागरिकों द्वारा अमेरिका वासियों को अमेरिकी–फ्रांस मित्रता के प्रतीक स्वरूप, अमेरिका की आजादी के सौ वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में दिया गया उपहार है। इसकी संकल्पना फ्रेडरिक ऑगस्ट बार्थोल्डी की थी जिन्होंने मूर्ति बनाई थी तथा इसका फ्रेमवर्क फ्रांस के इंजीनियर गुस्ताव ईफिल ने तैयार किया था। मूर्ति के मुकुट में लगी सात तीलियाँ सात समुद्र तथा सात महाद्वीप की द्योतक हैं। मूर्ति की ऊँचाई 305 फीट है। इसमें 31 टन ताँबा तथा 125 टन स्टील का प्रयोग हुआ है। मूर्ति के आधार का वज़न 27000 टन है। 3.5 लाख लोग

इसे प्रतिवर्ष देखने आते हैं। स्टेचू के हाथ में जो पुस्तक है उसमें रोमन में 4 जुलाई 1776 लिखा हुआ है क्योंकि इसी तारीख में अमेरिका इंग्लैण्ड से आजाद हुआ था।

न्यूयॉर्क अमेरिका का अत्यन्त व्यस्त व्यावसायिक शहर है। इसकी जनसंख्या का घनत्व भी और शहरों से अधिक है। इस शहर में अनेक महत्त्वपूर्ण इमारतें हैं जिनमें कार्यालय स्थापित हैं। मैनहटन के मध्य में स्थित टाइम्स स्क्वेयर की सुन्दरता रात में कई गुना बढ़ जाती है। जगमगाते बड़े–बड़े होर्डिंग्स बरबस अपनी ओर ध्यान खीचते हैं। 103 मंजिली अम्पायर स्टेट बिल्डिंग जो कुछ वर्ष पहले तक न्यूयार्क की सबसे ऊँची इमारत थी, यहीं स्थित है। अब वह खिसक कर तीसरे स्थान पर आ गई है। वर्तमान में न्यूयॉर्क में सबसे ऊँची इमारत वर्ल्ड ट्रेड सेंटर की है जो 2001 में आतंकवादियों द्वारा ध्वस्त कर दिए गए जुड़वाँ टावर्स के स्थान पर बनी है। अमेरिकी सरकार ने 9–11 सितम्बर के हमले में मारे गए निरपराध लोगों की स्मृति में ज़ीरो ग्राउण्ड पर एक बड़ा स्मारक निर्मित कराया है जिस पर दिवंगत लोगों के नाम अंकित हैं। उस स्मारक को देख कर आँखें स्वतः भर आती हैं। 'न्यूयॉर्क स्टॉक एक्सचेंज' जो विश्व का सबसे बड़ा कारोबारी हब है, वॉल स्ट्रीट मैनहटन में ही है। इसका प्रतीक बुल है जिसे देखने बहुत लोग आते हैं।

अब बारी थी अमेरिका की राजधानी वाशिंगटन की। वाशिंगटन में इतने दर्शनीय स्थल हैं कि एक या दो दिन में उन्हें देख पाना संभव नहीं है। अकेले नेशनल मॉल में इतने बड़े–बड़े म्यूजियम हैं कि एक–एक को देखने के लिए एक दिन पर्याप्त नही है। स्थान–स्थान पर लगे साइनबोर्ड जिन पर उस स्थान के आसपास के क्षेत्र का उल्लेख होता है,

पर्यटकों के लिए अत्यन्त सुविधाजनक होते हैं। मेट्रो अथवा बस का पास ले कर यहाँ बहुत आराम से भ्रमण कर सकते हैं। विश्व बैंक, अन्तराष्ट्रीय मुद्राकोष, व्हाईट हाउस, संसद की बिल्डिंग, कैपिटल हिल तथा अनेक म्यूजियम इसी नेशनल मॉल कहे जाने वाले क्षेत्र में स्थित हैं। इनके अतिरिक्त इसी क्षेत्र में अत्यंत प्रसिद्ध मान्यूमेन्ट तथा मेमोरियल हैं। डी. सी. मेमोरियल उन सबमें विशेष है। यह अमेरिका के प्रथम राष्ट्रपति जॉर्ज वाशिंगटन की स्मृति में नागरिकों के अनुदान से बना है।

जिस समय वाशिंगटन मान्यूमेन्ट निर्मित हुआ था, यह अमेरिका की सबसे ऊँची इमारत थी। इसके निचले भाग में पचास ध्वज लगे हैं जो अमेरिका के पचास राज्यों के प्रतीक हैं। आठ लाख दर्शक प्रति वर्ष इसे देखने आते हैं। यह इतना ऊँचा है कि बाहर के किसी भी हिस्से से दिखाई देता है। इसमें ऊपर जाने के लिए लिफ्ट है जहाँ से बाहर दिखाई देता है। रूज़वेल्ट, जो अमेरिका के चार बार चुने जाने वाले अकेले राष्ट्रपति हैं तथा जिन्होंने द्वितीय विश्युद्ध के समय देश का नेतृत्व किया था, उनके नाम से रूज़वेल्ट म्यूज़ियम यहीं स्थापित है। अन्य महत्त्वपूर्ण म्यूज़ियम हैं जेफरसन म्यूज़ियम तथा लिंकन मेमोरियल जो अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति हैं तथा मार्टिन लूथर मेमोरियल। स्मिथ सोनिअन स्टेशन पर उतर कर इन स्थानों को बहुत आराम से देखा जा सकता है।

चूँकि मैं पहले भी यहाँ घूम चुकी थी अतः इस बार बेटी साथ नहीं गई। वह 'हॉप ऑन हॉप ऑफ़ रेड लाइन बस' का पास ले कर मुझे और अपने श्वसुर को बस में बैठा कर अपने ऑफिस, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, चली गई। थोड़ी देर तक मन संशय से घिरा रहा कि कहीं हम भटक न जाएँ किन्तु जब पहले देखे हुए स्थान सामने से गुज़रने लगे तब अपने भीतर विश्वास लौटा। इस बार 'जेफ़रसन म्यूजियम' बड़ा सूना लग रहा था क्योंकि पहली बार जब मैं वहाँ गई थी, 'चेरीब्लॉसम्स फेस्टिवल' चल रहा था। बसन्त का मौसम था और टाइडल बेसिन के किनारे के वृक्ष फूलों से लदे हुए थे। मेरे ज़ेहन में वह स्मृति कौंध गई।

सन् 2008,मार्च के अन्तिम सप्ताह में, मैं बेटी के पास पहली बार अमेरिका गई थी। वे लोग जहाँ रहते थे, आसपास के अधिकतर भारतीय आन्ध्रप्रदेश के थे। कोई ऐसा नहीं था जिससे हिन्दी में बात कर सकूँ। उस समय मैंने यह शिद्दत से अनुभव किया कि भाषा हमें कितना

भारहीन करती है! मुझे कवि केदार नाथ सिंह की पंक्तियाँ, ''जैसे चींटियाँ लौटती हैं /बिलों में/कठफोड़वा लौटता है काठ के पास/ओ! मेरी भाषा/मैं लौटता हूँ तुममें/जब चुप रहते–रहते/ अकड़ जाती है मेरी जीभ/दुखने लगती है/ मेरी आत्मा'' बहुत याद आती थीं। मैं अपने को बहुत वीराने में अनुभव करती थी। इसी मनोदशा में मेरे कानों में अमृत बरसाती आवाज पड़ी थी 'पंख होते तो उड़ आती रे रसिया ओ......' नवरंग फिल्म का यह गाना मेरे दिल में भीतर तक उतरता चला गया था। मेरी जिज्ञासा का शमन करते हुए मेरे जामाता ने बताया कि यहाँ एक फेस्टिवल चल रहा है, इस समय कोई भारतीय कलाकार प्रस्तुति दे रहा है। किन्तु अफ़सोस जब तक हम वहाँ पहुँचे वह गाना समाप्त हो चुका था और अब स्टेज पर अपने पारंपरिक परिधानों में सजी धजी जापानी युवतियाँ सामूहिक नृत्य कर रही थीं। तीन चार पुरुष किनारे बैठे वाद्य यंत्र बजा रहे थे। गीत के बोल मधुर थे और नृत्य अत्यन्त शालीन था। मुझे अपने यहाँ के बीहू नृत्य की याद हो आई। मालूम हुआ यह 'चेरी ब्लॉसम्स फेस्टिवल' है। इस फेस्टिवल का इतिहास अत्यन्त रोचक है।

सैकड़ों वष पूर्व जापान वासियों ने अमेरिका के साथ जापान की मित्रता के प्रतीक के रूप मे 2000 पौधे पोटोमैक नदी के तट पर रोपने के लिए भेजे थे। दुर्भाग्यवश उन वृक्षों में कीड़े लग गए। इस पर राष्ट्रपति विलियम हावर्ड ने कृषि अधिकारियों के परामर्शानुसार उन वृक्षों को जलाने का आदेश दे दिया। किसी प्रकार के विवाद से बचने के लिए अमेरिकी सचिव ने जापान के राजदूत को दुख जताया। जापान ने पुनः 3000 वृक्ष भेजे। ये पौधे स्वस्थ थे अतः बहुत अच्छी तरह विकसित हुए। दोनो देशों की मित्रता के नाम पर पहला 'चेरी ब्लॉसम्स फेस्टिवल 1935 में मनाया गया था किन्तु 1941 में पर्लहार्बर पर जापान द्वारा बम गिराए जाने के बाद चार चेरी के वृक्ष काट डाले गए थे। किन्तु बाद में सब सामान्य हो गया। प्रत्येक वसंत में यह उत्सव मनाया जाता है। जिस समय 70 प्रतिशत फूल खिल जाते है एक तिथि की घोषणा सरकार कर देती है और उसी दिन से आयोजन आरंभ हो जाता है। देशी–विदेशी पर्यटकों को यह दृश्य बहुत लुभाता है। दूर–दूर तक जहाँ भी निगाह जाती है सफेद गुलाबी रंग के चमकीले फूल अपना सौन्दर्य बिखेरते नज़र आते हैं। वह दृश्य देखना एक अविस्मरणीय अनुभव है। लोग वहाँ पिकनिक भी मनाते हैं।

'चेरी ब्लॉसम्स' जापानी शब्द 'सकूरा' का पर्यायवाची है जो जीवन की निरंतरता तथा भौतिक सौन्दर्य की क्षण भंगुरता को व्यक्त करने वाला है। ये फूल भी आँधी, पानी नहीं सहन कर पाते।

जीवन के विकास की विभिन्न भौतिक परिस्थितियों को समझने की दृष्टि से 'नेचुरल हिस्ट्री म्यूजियम' बहुत महत्त्वपूर्ण है। किस प्रकार जल से जीवों की उत्पत्ति हुई तथा बीतते समय के साथ कौन सी प्रजातियाँ लुप्त हो गईं आदि बातें अत्यन्त सिलसिलेवार ढंग से यहाँ प्रदर्शित की गई हैं। डायनासोर के बड़े बड़े कंकाल देखकर भय मिश्रित रोमांच हो जाता है।

'नासा म्यूजियम' अनूठा है। इसमें किस प्रकार उड़ते पक्षियों को देख कर मानव के भीतर उड़ने की इच्छा जाग्रत हुई होगी तथा इस प्रयास में किस–किस प्रकार के आरंभिक यान बने, प्रोपेलर्स में किस तरह के बदलाव हुए, सबको साकार आकृतियों में देखना अत्यन्त ज्ञानवर्द्धक है।

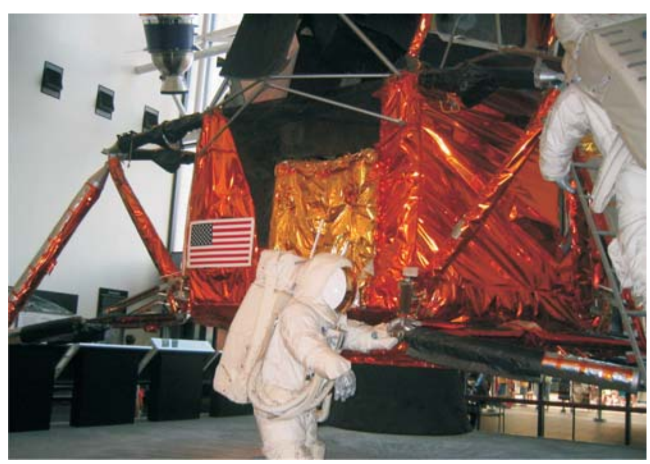

जो छात्र इनका अवलोकन करते होंगे उन्हें बहुत कम प्रयत्न में बहुत जानकारी मिल जाती होगी। सबसे सुखद लगता है चन्द्रयान की अनुकृति देखना जो पहली बार मानव के साथ चन्द्रमा पर उतरा था। इनके अतिरिक्त नेशनल जूलॉजिकल जू, बॉटनिकल गार्डेन आदि भी मन मस्तिष्क पर स्थायी प्रभाव छोड़ते हैं। 'व्हाईट हाउस' की इमारत की जो कल्पना मेरे मस्तिष्क में थी, वास्तविकता में वह उसके अनुरूप नहीं थी। उसके नाम से मेरी कल्पना में एक भव्य छवि उभरती थी किन्तु जब सामने देखा तो वह इमारत निहायत सामान्य लगी, हाँ संसद भवन जिसे कैपिटल हिल के नाम से जाना जाता है, बहुत सुन्दर है।

मेरी अमेरिका में रहने की अवधि समाप्त हो चली थी और अब मुझे अपनी छोटी बेटी के पास हॉलैण्ड आना था। सात जुलाई को अमेरिका के डलास हवाई अड्डे पर बेटी जामाता छोड़ने आए थे। लगभग नौ घंटे की यात्रा के बाद मैं एम्सटर्डम एयरपोर्ट पर थी। छोटी बेटी अपने एक मित्र की गाड़ी से अपनी चार वर्षीय बेटी के साथ मुझे लिवाने आ गई थी। मेरा सामान गाड़ी में रखवा कर लौटने के लिए उसने ट्रेन का टिकट ले लिया। उसके मित्र वहीं से अपने ऑफिस निकल गए थे। परदेस में अपने देश का कैसा जज़्बा होता है, वहाँ जा कर अनुभव होता है। सब एक दूसरे की बड़ी सहायता करते हैं।

रास्ते में बेटी ने बताया कि मुझे सरप्राइज़ देने के लिए उन्होंने जो कॉटेज हफ्ते भर के लिए स्विट्जरलैण्ड में बुक कराया था, रजत के अचानक भारत जाने के कारण उसे कैन्सिल कराना पड़ा। माँ की तबियत खराब हो जाने की वज़ह से उनको भारत आना पड़ा था। 'अब लोकल ही घूमेंगे' उसने मायूस हो कर कहा। 'कोई बात नहीं' मैंने उसे आश्वस्त किया। किन्तु यही बात जब उसने अपनी स्विट्जरलैण्ड वाली सहेली से बताई तो उसने आग्रहपूर्वक कहा 'मेरे घर रह कर आंटी को घुमाओ, पर यहाँ आओ जरूर।' छोटी कक्षाओं में कभी पढ़ा था 'स्विट्जरलैण्ड धरती का स्वर्ग है' तथा 'कश्मीर भारत का स्विट्जरलैण्ड है।' अतः इन दोनों स्थानों को देखने की इच्छा मेरे भीतर विद्यमान थी। कश्मीर का तो एक बार टिकट भी करा लिया था किन्तु वहाँ का माहौल बिगड़ गया था और हमें अपने टिकट निरस्त कराने पड़े थे।

स्विट्जरलैण्ड का इस तरह सुयोग बनेगा, कभी सोचा नहीं था। अपनी सहेली की बातों से उत्साहित हो कर बेटी ने ऑनलाइन टिकट बुक करा लिया। हमारी फ्लाइट सुबह सात बज कर दस मिनट पर थी इसलिए रात में ही हम लोग एम्सटर्डम आ गए। होटल की बस में हम स्टेशन से आ गए। होटल की बुकिंग बेटी ने पहले से ही करा ली थी।

नियत समय पर जहाज उड़ा और घंटे भर के सफर के बाद जेनेवा एयरपोर्ट पर उतर गया। हमारे पास सिर्फ़ केबिन बैग थे जिससे हम चेक इन का सामान लेने के झंझट से मुक्त थे। हमने पासपोर्ट रख लिए थे किन्तु किसी ने किसी तरह की पूछताछ नहीं की। शेंगेन वीसा था इस लिए अलग से स्विट्जरलैण्ड के लिए वीसा की आवश्यकता नहीं थी। जहाज से बाहर आ कर अभी एक बेंच पर बैठी थी कि नज़र सामने रखे चार बड़े–बड़े डिब्बों पर पड़ी । चार अलग–अलग तरह का कूड़ा डालने के लिए, किस तरह का कूड़ा किस डिब्बे में डाला जाएगा, उन पर लिखा हुआ था। कौतुहल वश मैंने अपनी डायरी में नोट भी कर लिया था। क्रमशः एल्युमिनियम, पेपर–न्यूज़पेपर तथा मैगजीन, पालतू पशुओं के प्लास्टिक बोतलों के लिए तथा अन्य प्रकार के कूड़े के लिए चार डिब्बे थे। वहाँ प्रत्येक सूचना फ्रेंच, जर्मन तथा अंग्रेजी में दी जाती थी। उनका अंग्रेजी का उच्चारण बिल्कुल भिन्न था। संयोग से बेटी जर्मन जानती है अतः अत्यंत विश्वासपूर्वक वह ट्रेन पकड़ती थी। यद्यपि वहाँ से बर्न, जहाँ उसकी सहेली थी, जेनेवा से डेढ़ घंटे की दूरी पर था किन्तु फोन द्वारा मालूम हुआ कि वहाँ उस समय बारिश हो रही थी इसलिए इधर घूम लेना बेहतर होगा। बेटी ने तीन दिन का पास ले लिया। मेरे लिए आश्चर्य था कि उस पास द्वारा हम ट्रेन से, बस से अथवा मोटरबोट से सफर कर सकते थे।

जेनेवा से लाउज़ान, लाउज़ान से मॉन्ट्रिक्स, फिर मॉन्ट्रिक्स से स्वाइज़्मेन हमने पनोरमा ट्रेन से यात्रा की। इन सभी स्थानों पर ट्रेन बदलते रहे किन्तु ट्रेन बदलने के लिए किसी अन्य प्लेटफॉर्म पर नहीं जाना पड़ा। मनमोहक पहाड़ियाँ, हरे–भरे जंगल, कभी ट्रेन सुरंग में प्रवेश करती और जहाँ सुरंग खत्म होती आँख के सामने एक नया नज़ारा होता। मैं इन दृश्यों से अभिभूत थी। हरे रंग के विविध प्रकार चकित करते थे। घूमते–फिरते हम शाम को बर्न पहुँचे। अगले दिन रविवार था अतः अपने पति के साथ बेटी की सहेली श्वेता भी हमारे साथ चल दी।

स्विट्जरलैण्ड के पहाड़ों की खूबसूरती से परिचित होने के लिए ट्रेकिंग वहाँ बहुत लोकप्रिय है। सैलानी कॉटेज बुक कराते हैं और अलग अलग पहाड़ों पर जाते हैं। हमने भी यह अनुभव लेना चाहा। बस द्वारा हम पहले स्टेचेलबर्ग गए। वह एक खूबसूरत स्थान है। वहाँ चारो ओर के पहाड़ों से निरन्तर जल की धाराएँ नीचे आती रहती हैं। उस दिन हमारे गाइड

थे अश्विनी, श्वेता के पति। ट्रेकिंग के लिए उन्होंने जिस पहाड़ी का चुनाव किया, उसका रास्ता अत्यंत सहज था। ऊपर चढ़ने के लिए चौड़ा पैदल पथ था। रास्ते में स्वच्छ जल के झरने, तरह–तरह के स्वतः खिले हुए फूल तथा मार्ग में मिलने वाले सैलानी थकान का बोध नहीं होने देते थे। लगभग तीन बजे हम फिर वहीं आ गए थे जहाँ से ट्रेकिंग शुरू की थी। इसके पश्चात् हमने क्वाटर्ज के पहाड़ देखे। दोनों ओर ऊँचे–ऊँचे पहाड़ों के बीच में वेग से बहती हुई जलधारा और उसके किनारे पर पहाड़ के साथ–साथ बने लकड़ी के पुल से लगभग एक किलोमीटर की पैदल यात्रा रोमांचकारी अनुभव था।

स्विट्जरलैण्ड के दर्शनीय स्थानों में टिटलिस का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यद्यपि यहाँ अनेक ग्लेशियर हैं किन्तु टिटलिस माउन्टेन भारतीय पर्यटकों की पहली पसंद है। यहाँ पहुचने के लिए पहले एन्जिलबर्ग जाना पड़ता है। दस हजार फीट की ऊँचाई तक ट्रेन जाती है। इसके बाद पारदर्शी ट्राली, जिसे 'गेन्डोला' कहा जाता है, उसमें बैठ कर चार–पाँच हजार फीट की चढ़ाई पार कर बर्फ के पहाड़ों पर पहुचते हैं। यह विश्व का सबसे पहला गन्डोला अर्थात् रोप वे पर चलने वाली ट्राली है। यहाँ दूर–दूर तक बर्फ के अतिरिक्त और कुछ दिखाई नहीं देता। इसी के बीच है टिटलिस माउन्टेन स्टेशन जहाँ पर्यटकों के मनोरंजन के लिए तरह–तरह की गतिविधियाँ आयोजित की जाती हैं। यहाँ एक अत्यन्त शानदार रेस्टोरेन्ट है जहाँ तरह तरह का नाश्ता, भोजन, पेय सब उपलब्ध है। इसके ऊपर जाने के लिए सीढ़ियाँ हैं। वहाँ एक बड़ा कक्ष है जिसमें कई सोफे पड़े हैं। वहाँ बैठ कर खिड़की से बाहर का दृश्य निहारना अत्यन्त मनभावन है। वहाँ बर्फ की गुफाएँ सर्वाधिक आकर्षक हैं। 150 मीटर लम्बाई वाली व बीस मीटर ऊँची बर्फ की गुफाओं के भीतर बहुत सुन्दर मानव निर्मित आकृतियाँ हैं, जो न जाने कितने वर्षों से इसी रूप में हैं। जून के महीने में ओवरकोट, कैप, दस्ताने, बन्द जूते पहनने के बाद भी ठंड़ हड्डी तक महसूस होती थी। इस गुफा के भीतर भ्रमण करते हुए किसी जादुई लोक में घूमने का एहसास होता है।

संयोगवश जिस समय हम वहाँ पहुँचे, बर्फीले तूफान की संभावना के कारण पर्यटकों को ऊपर खुले में जाने से रोक दिया गया। बड़ी–बड़ी खिड़कियों से बाहर गिरती बर्फ को देख कर ही सन्तोष करना पड़ा। लौटते समय पिघलता ग्लेशियर देख कर सुखद अनुभूति हुई। वही जल, जो नीचे

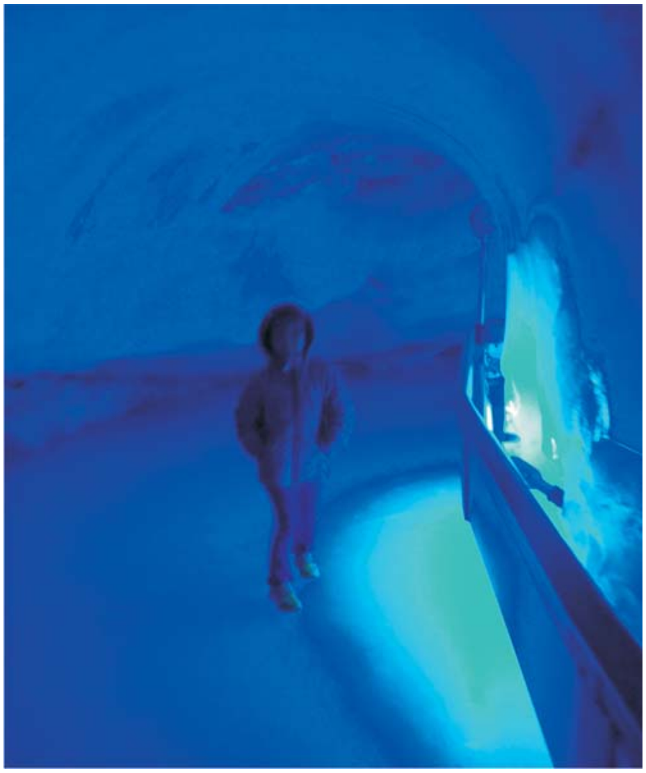

आ कर रंगहीन हो जाता है, ऊपर से जब नीचे आता है तो देख कर लगता है जैसे दूध की धारा बह रही है। प्रकृति प्रदत्त सौन्दर्य और मनुष्य का उसे संरक्षित रखते हुए अपने मनोरंजन के लिए उसका उपयोग किस तरह किया जा सकता है, इसे देखना हो तो एक बार यहाँ की सैर जरूर करनी चाहिए।

यह देश अत्यन्त शान्त है। प्रथम एवं द्वितीय विश्वयुद्ध के समय जब पूरा यूरोप उसमें कूद पड़ा था, स्विट्जरलैण्ड तटस्थ था। यदि यहाँ के लोगों की सहृदयता की चर्चा न करूँ तो उनके प्रति अन्याय होगा। अत्यधिक ऊँचाई के कारण यों तो मेरा भी जी थोड़ा घबराने लगा था किन्तु मेरी नातिन को तो उल्टी भी हो गई। ठीक कैन्टीन के बाहर साफ सुथरा फर्श गन्दा हो गया। हमें अफ़सोस हुआ। बेटी पैसे दे कर सफाई करवाने के लिए तैयार थी किन्तु हमें आश्चर्य हुआ जब मालिक ने कहा, ''आप इसकी फ़िक्र न करें''। हम वहाँ फिर भी खड़े रहे, तभी एक आदमी पानी का पाइप ले कर और दूसरा बड़े से हैन्डिल वाला ब्रश ले कर आया और उस स्थान को पहले जैसा साफ सुथरा कर दिया। मैंने एक बात पर ध्यान दिया कि पर्यटकों में अधिकांशतः भारतीय थे। वे जिन बेंचों पर बैठे थे, उनके आसपास सिगरेट का टोटा, खाने पीने की छोटी–छोटी चीजें, आदत के अनुसार गिरा रखी थीं। सफाई करने वाले ने एक नज़र उन पर डाली जो तीखी नही, तो अच्छी भी नहीं थी।

स्विट्जरलैण्ड में छोटी–बड़ी अनेक झीलें हैं जिनमें जेनेवा तथा ल्यूजर्न काफी लोकप्रिय हैं। हमने फेरी में सैर के लिए ल्यूजर्न लेक का चुनाव किया। अगले दिन आराम से उठे और बुलेट ट्रेन में बैठ कर उस स्थान पर पहुँचे जहाँ से फेरी मिलती थी। शाम का समय था किन्तु अभी सूरज अस्ताचलगामी नहीं हुआ था। दोमंजिले मोटरबोट की बनावट कुछ इस प्रकार की थी कि उसका इंजन ऊपर से दिखाई देता था। दिखाई देने वाला भाग अत्यंत आकर्षक था। मोटरबोट में बैठ कर शीशे की खिड़की से बाहर तट का दृश्य अत्यन्त सुन्दर लगता था। इच्छा होती थी सब कुछ कैमरे में कैद कर लूँ और किया भी। बहुत से लोग अपने मित्रों के साथ क्रूज़ में गपशप और भोजन का भी आनन्द उठा रहे थे। हमें बर्न पहुँचने में बारह बजने वाले थे अतः हमने भी रात का भोजन वहीं लिया। शाकाहारी लोगों को बाहर भोजन सम्बन्धी दिक्कत आती है क्योंकि शाकाहारी व्यंजन में वे लोग अंडा भी शामिल करते हैं। हमें वापस बेटी की सहेली के घर आने में रात के साढ़े बारह बज गए थे। दिन के मुकाबले ट्रेन काफी खाली थी, स्टेशन की रौनक भी कम हो गई थी किन्तु किसी प्रकार का भय नहीं सता रहा था।

हमारी यात्रा का यह अन्तिम दिन था और इसे हमने बर्न में घूमने के लिए सुरक्षित रखा था। श्वेता हमारे साथ थी। शहर के बीच में बहने वाली नदी पर बना पुल पार कर हम बीयर पार्क पहुँचे। वहाँ भालुओं के लिए भूमितल में नीचे गुफाएँ बनाई गई हैं। घूमने के लिए भालू गुफा से बाहर भी

आते हैं। वहाँ से काफी चढ़ाई पार करने पर रोज़ गार्डेन है जहाँ से शहर का काफी बड़ा भाग दिखाई देता है। यूरोप के शहरों में मुझे एक दृश्य हर जगह नज़र आया। बाजारों के बीच में बड़ा सा खुला भाग होता है जिसके किनारे खाने–पीने के लिए रेस्टोरेन्ट होते हैं। इन स्थानों के फर्श इतने साफ सुथरा होते हैं कि घूमने से थके हुए पर्यटक फर्श पर बैठ कर श्रम का परिहार करते हैं। कहीं–कहीं पर कुछ लोग शौकिया गाते बजाते हैं। वहाँ कोई भीख माँगता नज़र नहीं आता किन्तु चैरिटी बॉक्स कई जगह नज़र आते हैं। बर्न शहर के बीच में भी ऐसा स्थान था किन्तु मैंने देखा वहाँ नीचे कोई नही बैठा था। उस स्थान का उपयोग बाज़ार लगाने के लिए किया जाता है। वहाँ अत्यन्त सज़ी धजी दुकानें रोज़ सुबह से लगती हैं जहाँ फल फूल और ताज़ी सब्जियाँ मिलती हैं। पास ही पूरा बाज़ार है, कई मंजिले स्टोर हैं जहाँ ब्रांडेड कपड़े, जूते, बैग आदि सभी तरह का सामान उपलब्ध है। स्विस घड़ियाँ तथा स्विस चॉकलेट पूरे विश्व में प्रसिद्ध हैं। यहाँ की जर्सी गाएँ बहुत स्वस्थ होती हैं तथा बहुत दूध देती हैं। श्वेता ने हमें वहाँ का पार्लियामेन्ट हाउस, घंटाघर आदि दिखाया। हम कब घूम रहे होते, कब चमचमाती ट्राम में बैठ जाते, यह सुखद अनुभव था। यों तो यूरोप–अमेरिका सभी जगह घूमना बेहद सुविधाजनक है किन्तु स्विट्जरलैण्ड में तो यह सहूलियत कुछ अधिक ही है।

शाम को गाँव दिखाने का प्रस्ताव अश्विनी की ओर से आया। मेरी तो जैसे दुआ ही कुबूल हो गई। ट्रेन में बैठ कर हम चल पड़े गाँव की सैर के लिए। रास्तें में बहुत ऊँची –ऊँची इमारतें दिखीं। मालूम हुआ दूध से तरह–तरह के चीज़, चॉकलेट तथा अन्य उत्पादों के निर्माण के लिए गाँवों में कारखाने लगाए गए थे। अब हम पैदल खेतों के बीच में बने पक्के रास्ते पर थे। एक तरफ स्वस्थ मक्के के पौधे दूसरी ओर पके हुए जौ के खेत, देख कर आश्चर्य हुआ। हमारे अपने देश में ये दोनों फसलें अलग–अलग समय पर होती हैं। गाँव में घर तो दिखाई दिए, खेती के उपकरण भी दिखे किन्तु आदमी एक भी नहीं दिखा। गले में लटकती बड़ी सी घंटी, भूरे रंग की स्वस्थ जर्सी गाय कहीं–कहीं दिखाई दी। यूरोप के शहरों का क्षेत्रफल कम है तथा यातायात के साधनों की उपलब्धता इतनी अधिक है कि बिना व्यक्तिगत वाहन के भी किसी प्रकार की परेशानी नहीं होती।

अब दुबारा इन स्थानों को देखने का संयोग शायद ही बने, किन्तु स्मृति के कोश में ये दृश्य सदा के लिए संचित हो गए हैं। बेटियों का आत्मविश्वास देख कर यह धारणा पुख्ता हुई कि यदि उन्हें शिक्षा का भरपूर अवसर दिया जाए तो वे बेटों से कहीं कम नहीं हैं।

प्रताड़ित की ताड़ना

अजय कुमार बियानी
भूविज्ञान विभाग, डी.बी.एस.पीजी. कालेज, देहरादून

आज के युग में मानव जाति की बढ़ती हुई प्रगति में पृथ्वी से प्राप्त संसाधनों का महत्वपूर्ण योगदान है। पृथ्वी में उपलब्ध संसाधनों का दोहन मनुष्य प्रचुर मात्रा में कर रहा है। इस बढ़ते हुए उपयोग के दुष्प्रभाव एक तो स्वयं मनुष्य पर हो रहे हैं तथा इससे प्रकृति पर भी दुष्प्रभावों की चिन्ता दिन–प्रति–दिन मुखर होती जा रही है। पृथ्वी हितैषी होने के कारण आज बहुत से विद्वान, नेता, सामाजिक कार्यकर्ता एवं स्वंय भूवैज्ञानिक भी पृथ्वी पर होने वाली हर अशुभ घटना के लिए कहीं–न–कहीं से मनुष्य के हस्तक्षेप तथा मानव जनित कारणों को दोषी ठहराकर अपनी संवेदनशीलता, जागरूकता तथा भविष्यद्रष्टा होने के प्रमाण देते हैं और अक्सर मांग भी करते हैं कि विकास से जुडी गतिविधियों पर पूर्ण रोक लगा दी जाए। ऐसा अक्सर प्रतीत होता है कि मूल प्रश्न के पीछे की समस्या का समाधान क्या होना चाहिए, इससे इन लोगों को कोई लेना देना नही हैं। एक दूसरा प्रश्न् यहाँ पर यह भी उठता है कि प्रकृति मे होने वाली हर दुखदायी त्रासदी का जिम्मेदार मनुष्य ही है? मनुष्य का प्रभाव सामान्य तौर पर जल एंव वायु प्रदूषण मे नजर आ जाता है और इनका हम सामान्यीकरण अथवा जनरलाइजेशन कर हर घटना को मनुष्य की गतिविधियों से जोड़ देते हैं। भू–विज्ञानी अच्छी तरह से जानते है कि जल और वायु प्रदूषण में भी पृथ्वी अथवा प्रकृति का हाथ होता हैं। अगर कोई भू–विज्ञानी इससे इत्तफाक नहीं रखे तो कुछ किया नहीं जा सकता है।

अगर हम पृथ्वी के एक बहुत ही लम्बे इतिहास और समग्र व्यवहार का अवलोकन करें तो यह समझ में आएगा कि पृथ्वी एक जिन्दा नही बल्कि जिन्दादिल ग्रह है। पृथ्वी में अपने आपको बनाने अथवा बिगाडने की बेमिसाल, अद्भुत क्षमता हैं। यह क्षमता आपके और हमारे बूते के बाहर की हैं। मेरा अपना मत हैं कि हम प्रौद्योगिकी में चाहे जितने उन्नत हो जाए, कुछ क्षेत्रों में पृथ्वी की क्षमता की रत्ती भर बराबरी भी नहीं कर सकते है जैसे क्या हम महासागरों को बना–बिगाड सकते हैं? या महाद्वीपों को प्राईमरी के बच्चों की भाँति अंगुली पर नचा सकते हैं। भगवान कृष्ण गीता में एक स्थल पर कहते हैं हे अर्जुन! यह सब जो तुम देख रहे हो वह मेरी क्षमता का एक अंश मात्र है। भगवान ने यह कथन ब्रहमाण्ड के सन्दर्भ में दिया था। पृथ्वी की क्षमता भी ऐसी लगती हैं कि भगवान द्वारा संचालित हो रही है।

आज तक हम लगातार प्रचार एवं प्रसार के कारण अर्न्तमुखी, निराशावादी एवं स्वयं को लांछित समझने वाले हो गए हैं परिणामस्वरूप जो भी पर्यावरण की बात करता है उसे तुरंत मान लेते हैं। लगातार यह कहते रहने से कि पृथ्वी का पर्यावरण मानव जनित क्रियाओं द्वारा बिगडा है तो सबसे पहले स्वयं को गुनाहगार समझ कर आगे की रूप–रेखा तय करते हैं और स्वंय के बनाए हुए जाल में ऐसे फंसते हैं कि उसके अन्दर छटपटाते तो रहते हैं पर निकल नही पाते। क्या सारे के सारे जाल हमारे द्वारा ही बनाए गए हैं? पृथ्वी कि निम्न क्रियाओं को समझने का प्रयास करें जिसमें पृथ्वी ने स्वयं को छोटे से लेकर बडे पैमाने पर ताड़ित करा है। पृथ्वी पर जब से जीवन आया है, 542 करोड़ वर्ष पूर्व, तब से आज तक 5 बार वृहद विलोपन (मास एक्सटींक्शन) की घटनाए आर्डोविसियन (45–44 करोड़ वर्ष पूर्व), डेवानियन (37.5 से 36 करोड़ वर्ष पूर्व), परमियन (करीब 25 करोड़ पूर्व), ट्रायसिक (20 करोड पूर्व) एंव क्रिटेशियस पेलिओसीन (6.6 करोड पूर्व) समय में हुई थी और उस वक्त समुद्री आबादी का नब्बे प्रतिशत भाग तबाह हो गया था। यह तो मुख्य वृहद विलोपन की घटनाए हैं। परन्तु जब से जीव ने पृथ्वी पर जन्म लिया (54.2 करोड़ वर्ष) है तब से अभी तक पृथ्वी पर 20 से अधिक बार छोटे–बडे विलोपन हुए हैं। वास्तविकता तो यह है कि विलोपन की क्रिया सतत् है हर एक करोड़ वर्ष में 20–50 समुद्री जातियाँ नष्ट होती रहती हैं। आक्सीजन ने भी 230 करोड़ वर्ष पूर्व, उस वक्त के जीवन को नष्ट करा है। आज हम ग्लोबल वार्मिग के प्रति चिन्तित हैं। इस चिन्ता में दुबले होकर प्रति वर्ष अरबों रूपए सारी दुनिया सेमिनारों और सम्मेलनों मे खर्च करती हैं और नित नए संकल्प लेती है तथा बुद्धि का उपयोग कर एक से एक कठोर और जटिल

कानून बनाती है। जो बाद में हमारे लिये ही जी का जंजाल साबित होते हैं। तापमान का बढ़ना–घटना सामान्य प्रक्रिया है। मनुष्य नहीं था तब भी तापमान बढने और घटने कि क्रिया इतने व्यापक रूप में होती थी कि दांतो तले उंगली दब जाए। क्रिटेशियस के अंत मे पृथ्वी का तापमान आज के औसत तापमान (15°सेल्सियस) से 8–9°सेल्सियस अधिक था और वातावरण मे CO_2का धनत्व 7000 पार्टस् पर मिलियन (जबकी आज 370–380 है) था। कैम्ब्रियन में तापमान और अधिक था। सबसे कम CO_2 172 पी.पी.एम. रही है। जब मनुष्य नहीं था तब भी पृथ्वी पर हिमनद स्वतः बने थे और नष्ट हुए थे। सबसे पहले हिमनद का नाम हुटोनियन (240–210 करोड वर्ष पूर्व), उसके बाद क्रायोजेनियम (8.5–6.3 करोड़), एन्डीय साहारन (46–42 करोड वर्ष पूर्व), कारू (36–26 करोड वर्ष पूर्व) और वर्तमान का नाम प्लीस्टोसीन जो की 26 लाख वर्ष पूर्व शुरू हुआ। कारू ग्लेशियर ने अपना साम्राज्य गोन्डवाना लेंड पर कायम कर रखा था।

पृथ्वी के सागर और महाद्वीपों का व्यवहार बिल्कुल हमारे जैसा है जब मर्जी आई संयुक्त परिवार बना लिया और जब मर्जी आई परिवार बिखेर दिया। इस प्रकार पूर्ण और आंशिक रूप से संयुक्त परिवार बनाने की घटना पिछले 300 करोड़ वर्षों में 12 बार हुई हैं। इन बारह घटनाओं में या तो सारे महाद्वीप इक्कठे हो गए थे या अपना एक छोटा समुदाय बना लिया था।

आज के जीवों की आकृति और प्रकार की तुलना हम हमारे पूर्वकालीन जीवों जैसे डायनासोर अथवा अफ्रीकन हाथी से करें तो आज का बौनापन हमें शर्मिन्दगी महसूस करा देगा। इस बौनेपन की जिम्मेदारी कौन लेगा?

पृथ्वी ने अपनी मर्जी से जल के विशाल स्रोत महासागरों को प्रदूषित अथवा अनफिट कर रखा है। आश्चर्य तो यह है कि पृथ्वी पर सोडियम के तो खनिजों की भरमार है परन्तु जब क्लोरीन वाले खनिजों की गणना करने का प्रयास करेंगे तो एक अच्छा खासा खनिजवेत्ता भी पसीने मे दिखेगा। नदियों का निर्मल जल समुद्र मे जाकर स्थाई रूप से खारा हो जाता है। यह पृथ्वी का किस तरह का व्यवहार है?

पृथ्वी भी पृथ्वी को खाती है। यह पृथ्वी को जिन्दा रहने के लिए जरूरी भी है। हर वर्ष महाद्वीपों के क्षरण से 20 अरब टन मिट्टी–पत्थर बहकर पृथ्वी के पेट समुद्र में जाती है। पृथ्वी की इस भूख को मिटाने में भारत का योगदान 10 प्रतिशत से भी अधिक है। एक विकासशील देश इतनी बडी कुर्बानी पृथ्वी को यथावत रखने में कर रहा है। हमारे नीति नियन्ता इस पर ध्यान देंगे।

हिमालय उपर उठने लगा तो उसे लगा कि मेरी उँचाई कम है तो वह रोने लगा। पृथ्वी को अपने नवजात शिशु पर दया आई तो उसने उसे उँचाई का आभास दिलाने के लिए एक बड़ा गडढ़ा लम्बाई के लम्बवत उत्पन्न कर दिया और इतना चौड़ा कि जहाँ तक उसकी निगाहें जाएं। जब हिमालय ने अपना आक्रोश कम करा तो पृथ्वी ने भी होशियारी दिखा कर उसी के अंश से उसके सामने स्थित गड्ढे को भर दिया।

उपरोक्त कुछ उदाहरण ऐसे हैं जो मनुष्य द्वारा संचालित रत्ती मात्र भी नहीं हैं। अगर और उदाहरणों की केटलागिंग करें तो आसानी से डाक्टर थीसीस का मसाला मिल जायेगा। पृथ्वी अगर हमे जब कुछ देती है तो उसकी कीमत भी लेती है चाहे वह भूस्खलन हो अथवा भूकम्प अथवा हिमस्खलन या अन्य प्राकृतिक क्रिया। पृथ्वी की प्रकृति है उल्ट फेर करना और करते रहना और हम में से जो 'स्मार्ट' है वे अपने अनुकूल वातावरण का निमार्ण कर..... ....

वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थानः एक परिचय

राकेश कुमार
डील, देहरादून

और सफ़लता हमको देना, करें विनती विज्ञान से।
आओ मिल सुलझायें रहस्य, हम सब अनुसंधान से।।

दिल्ली में सन् अड़सठ को, विज्ञान समाया जुनून में,
छिहतर में विस्थापित होकर, आये देहरादून में।
इसी वर्ष से नाम वाडिया, जुड़ा अपने संस्थान से,
आओ मिल सुलझायें रहस्य, हम सब अनुसंधान से।।

परदा उठाया उन बातों से, जिनमें भरम् व्यापक थे,
श्री वाडिया धन्य पात्र हैं, जो इसके संस्थापक थे।
उनके प्रयासों से जुडें, हिमालयी भू–विज्ञान से,
आओ मिल सुलझायें रहस्य, हम सब अनुसंधान से।।

जिज्ञासा गर पूछे हमसे, क्या कुछ धरा–हिमालय में,
एक बार अवलोकन कर लो, नौटियाल संग्रहालय में।
उत्तर प्रश्नों के मिल जायें, संग्रहित अभिज्ञान से,
आओ मिल सुलझायें रहस्य, हम सब अनुसंधान से।।

कारण निश्चित करते हैं, परिणाम और परिवर्तन से,
सम्भावना विकसित करते हैं, तकनीकी अध्ययन से।
सुझाव समर्पित करते हैं, जुड़े हुए कल्याण से,
आओ मिल सुलझायें रहस्य, हम सब अनुसंधान से।।

अन्टार्टिका से हिम–शिखरों तक, अध्ययन करें हिमनदियों का,
तकनीकी दृष्टिकोंण बतायें, इतिहास बना जो सदियों का।
भू–पहेलियाँ समझायें, प्रत्यक्ष और प्रमाण से,
आओ मिल सुलझायें रहस्य, हम सब अनुसंधान से।।

भूख अनकही

आशीष राणा
वा.हि.भूवि.संस्थान, देहरादून

न होती तू , न कर्म का सागर होता
हर रूप पीपल जैसे मुस्कराया होता
इस चित को न चिन्ता होती
हर सुबह मुस्कान से भरी होती
न होती तू , ऐ भूख
नन्हे हाथों की लकीरों की हस्ती होती
न होती तू , ऐ भूख
उन आँखो में सपनों की कश्ती होती
न होती तू संसार इतना क्रूर न होता
दया के दीपक मे अंधकार न होता
बडा ही क्रूर रूप होगा तेरा
जो संसार की हस्ती बदल डाली
देकर भूख तूने
हर पैसे मे गुलामी की बेड़ी डाली
थी वो घरों में, बाजारों हो गयी
भूख तेरे लिए, अपना सब कूछ खो गयी
बेरहम है तू, खून की प्यासी होगी
रिश्तो में क्रूर धार, तूने ही डाली होगी
तेरी अग्नि मे कितनी तपस है
जो हर चेहरा झुलस सा गया
कर – कर के कर्म में
फिर भी भूखा ही रहा गया।

भूपेन दा की सुरध्वनि

(भूपेन हजारिका को श्रद्धांजलि स्वरूप)

प्रदीप कुमार शर्मा
फ्लेट 6ए, भीकमजी क्रिस्टलस, त्रिपुरा रोड, जयानगर, गोहाटी

जाने के समय पर मेरी छाया से कहा
यहीं रहो तुम।
क्योंकि छाया में रहने से शरीर की माया
आघात हृदय में होता रहेगा प्रति आघात।
माया से बुने हुए जाल से नहीं निकलती है माया,
छाया छोड़ कर जी–जान से दी आशा
स्मरणीय कोहरे से भरा
शत शब्द शत गीतों से गाथा
द्वार पर बिछे बकुल फूल की खुशबू भरी माला।
मैं और मेरी छाया
दोनों – दोनों से अलग हो गया।
अब तो छाया ही बोलेगी भाषा
मातृभूमि के प्रेम गीत की डोली में
चल पड़ेगी हमारी प्रजा,
धरती की गोद मे सुला दी काया
चारों तरफ ध्वनि – प्रतिध्वनि
निःशब्द हाहाकार
गंगा क्यों बहती हो तुम।
क्यों बहती हो गंगा।
रोम–रोम से अनुभवी
सजग जनता।

मन करता है

प्रदीप कुमार शर्मा
फ्लेट 6ए, भीकमजी क्रिस्टलस, त्रिपुरा रोड, जयानगर, गोहाटी

मन करता हैं
कि मैं जहां भी जाऊँ
जो भी करूँ
सबका ह्रदय स्पर्श करता चलूँ।
मैं अपने लिए तो सब कुछ करता रहता हूँ –
इसलिए मेरे आसपास
कुछ भी कम महसूस होता नहीं।
अपने लिए तो ऐसा ही संसार रचना किए,
पोता, परपोता और सात जनम तक
अभाव अनातन आदि का
मायने खोज नही पायेंगे।
अभी करूँ तो ऐसा करूँ
पिता बनकर शिक्षा, माता बनकर प्यास
भ्राता बनकर हाथ, सखा बनकर सास
प्रजा बनकर कांध, राजा बनकर दास,
जर्जर धुंद कर, पंक्ति मे लिये
अन्न वस्त्र और झोपरी बना दोय
या तो प्रतिबद्धता का मिसाल रहूँ
सबका आदर का निशान बनू।
जो भी प्रयास करूँ ऐसा
आगे चलकर होता हैं सब का फल
अपना ही अपना जैसा –
नहीं बन पाता मैं ऐसा
मन करता है जैसा।

खुशी

जूली जायसवाल
भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण, हैदराबाद

कभी कभी मिलती है
लेकिन
जब मिलती है
तो सारे शिकवे
भुला देती है
रोती हुई आँखें भी
हंसा देती हैं
सोते हुए सपने भी
जगा देती है
हँसते हुए रोना भी
चाहूँ तो
रोने कहाँ देती है
ये खुशी
बड़े सिद्दत से
मिलती है
और एक मुद्दत से
मिलती है
महफिल में भी
कहाँ मिलती है
तो कभी कभी
अकेले में भी
हंस लेती है

तो कभी वीराने में
भटक जाती है
ये खुशी
कभी कभी फूलों के
खिलने से महकती है
तो कभी हवा के साथ
उडती है
कभी झरना बन
गिरती है
और
कल कल करती
नदी से मिलती है
और कभी
छूट जाती है
अकेले
कहीं किसी और रास्ते पर
किसी के इंतजार में
बाट जोहती है
ये खुशी

पहाड़

शान्ति प्रकाश 'जिज्ञासु'
महासर्वेक्षक का कार्यालय, भारतीय सर्वेक्षण विभाग, देहरादून

कितनी जल्दी रोमाचिंत हो जाते हो तुम
किसी पहाड़ का नाम सुनते ही
तैयार करने लगते हो अपने ट्रैकिंग बैग
मफलर स्वेटर और गर्म कम्बलें
बिजली सी कौंध जाती है मन में
ठण्डी हवा बहते झरने सफेद बर्फ
घनी छाया पाने को
जो मिल नहीं सकती कहीं और।

कितनी आसानी से ढूंढ लेते हो तुम
समान उतारने चढ़ाने और
पहाड़ पर बोझ ढोने के लिए
स्टेशन पर सस्ते पोटर
उसमें भी करते हो बहुत मोल भाव
उपलब्ध हो जाती है आसानी से हर चीज
जो उपलब्ध नहीं होती वहां आम आदमी के लिए।

उन पहाड़ों पर जहां आने जाने को
सिर्फ एक पगडंडी है, जंगली जानवर हैं
उफनते नदी नाले और घना जंगल
पार कर लेता है वो
चंद पैसों के खातिर किन्तु
आसान हो जाता है तुम्हारा सफर।

कैसे रहते होंगे बर्फ में, चंद कपड़ों के सहारे
और तुम खुश होते हो
उनकी पीठ पर बैठ कर चढ़ते उतरते पहाड़ पर
फिर भी करते हो मोल भाव
सिर्फ दस पांच रूपया बचाने भर को।

एक प्रश्न ?

गीता बसुमतारी
बी 602, पदम अपार्टमेन्ट, विजय काम्पलेक्स सर्वे, गोहाटी

अचानक रात का सन्नाटा भेदकर,
एक दर्दनाक चीख,
आग की लपटें और धुआं।
फिर
स्तब्धता और धरती पर पड़ी,
एक काली, ठंडी, नंगी लाश।
किसकी ?
एक पत्नी की,
जे सिर्फ तन की बन सकी, मन की नहीं –
जो सिर्फ तन की बन सकी, मन की नहीं –
एक बहू की,
जो पराई ही रही, अपनी न बन सकी –
एक स्त्री की,
जो हर वक्त सहमी, दुबकी ही रही
पर क्यों ?
आखिर क्या कमी थी उसमें?
सरस्वती की रूप थी वो
लक्ष्मी को भी प्यारी थी वो
फिर
क्यों न बनी वो दुर्गा,
रणचंडी काली
क्यों न लड़ी वो दुष्टों से
मुखौटा पहने समाज के ठेकेदारों से
क्यों बनी रही वो बनवासी सीता
हरदम तैयार
अग्नि में समाने को?

संस्थान समाचार

स्वतंत्रता दिवस समारोह–2015

स्वतंत्रता दिवस समारोह हर वर्ष की भाँति धूम–धाम से मनाया गया । इस अवसर पर कला प्रतियोगिता व विभिन्न खेल प्रतियोगितॉए आयोजित की गयीं जिसमे संस्थान के कर्मचारी एवम् उनके परिवारजनों ने बढ़–चढ़ कर भाग लिया। समारोह का समापन निदेशक महोदय द्वारा विजेताओं को पुरस्कार वितरित कर किया गया।

हिन्दी पखवाड़ा–2015

ऑफिस के दैनदिन कार्यों में हिन्दी भाषा के प्रयोग को प्रोत्साहन के उद्देश्य के साथ संस्थान में हिन्दी पखवाड़ा का आयोजन दि० 14 सितम्बर से 28 सितम्बर 2015 तक किया गया। हिन्दी पखवाड़े का शुभारम्भ डा० अनिल कुमार गुप्ता, निदेशक वा०हि०भू० संस्थान द्वारा किया गया। हिन्दी पखवाड़े मे आमंत्रित व्याख्यान, स्वरचित कविता पाठ, निबन्ध प्रतियोगिता एवम् वाद–विवाद प्रतियोगिता का आयोजन किया गया।

प्रथम आमंत्रित व्याख्यान डा० राजेन्द्र डोभाल, महानिदेशक उत्तराखण्ड विज्ञान एवम् प्रौद्योगिकी परिषद द्वारा दिया गया। अपने व्याख्यान में उन्होंने आम जन की समझ के लिये विज्ञानियों से अपने शोध कार्यो को हिन्दी भाषा मे पहुँचाने पर बल दिया। आमंत्रित व्याख्यानों की श्रृंखला में डा० वी०के०एस० दवे, भुतपूर्व प्रोफेसर, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रूड़की, रूड़की ने अपने व्याख्यान में सरल परन्तु सटीक शब्दों के प्रयोग पर जोर दिया। वहीं डा० सविता निदेशक भारतीय वन अनुसंधान केन्द्र व कुलपति भारतीय वन अनुसंधान केन्द्र, डीम्ड यूनिवर्सिटी ने सरल सहज शब्दों की पैरवी की।

संस्थान के वैज्ञानिकों ने भी तकनीकी विषयों पर हिन्दी में व्याख्यान दिया। इन व्याख्यानो में डा० संतोष राय आदि का व्याख्यान प्रमुख रहा। श्री हरीश चन्द्र, वित्त एवम् लेखाधिकारी ने वित्त सम्बन्धित विषय पर विभिन्न जानकारी अपने व्याख्यान में दी। जो काफी प्रशंसनीय रही। संस्थान के कर्मचारियो के लिये निबन्ध प्रतियोगिता में भी संस्थान कर्मचारियों की उत्साहजनक भागीदारी रही।

दूसरी तरफ स्कूली विद्धार्थियों के लिये निबन्ध प्रतियोगिता व वाद–विवाद् प्रतियोगिता में देहरादून शहर से क्रमशः चौदह व सोलह स्कूलों ने भाग लिया। वाद–विवाद का विषय था "सोशल मोबाइल एप व सोशल वेब साइटस की उपयोगिता"। छात्रों ने विषय के पक्ष व विपक्ष में तथ्यपरक् विचार प्रस्तुत किये। हिन्दी पखवाडे का समापन समारोह मुख्य अतिथि डा० सविता, निदेशक भारतीय वन अनुसंधान केन्द्र व कुलपति भारतीय वन अनुसंधान केन्द्र, डीम्ड यूनिवर्सिटी द्वारा सभी प्रतियोगिताओ में विजेताओं को पुरस्कार प्रदान कर किया गया।

15 अगस्त 2015

हिन्दी पखवाड़ा
सितम्बर 14-28, 2015
वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान, देहरादू
WIHG
1968
WIHG

WADIA INSTITUTE OF HIMALAYAN GEOLOGY, DEHRADUN

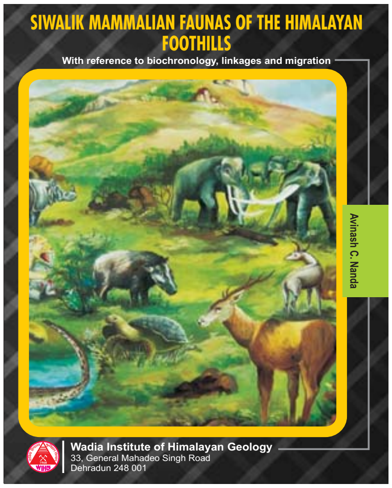

Rs.1200/- (India), US$ 100/- (Abroad)

NEW PUBLICATIONS

1. Nanda, A.C. 2015: Siwalik mammalian faunas of the Himalayan foothills with reference to biochronology, linkages and migration. Wadia Institute of Himalayan Geology, Dehradun, WIHG Nonograph Series No. 2, 341p.

2. Bhambri, R., Mehta, M., Dobhal, D.P. & Gupta, A.K. 2015: Glacier Lake Iniventory of Uttarakhand. Wadia Institute of Himalayan Geology, Dehradun, 78p.

Price: Rs. 500/- (India), US$ 50/- (Abroad)

OLD PUBLICATIONS

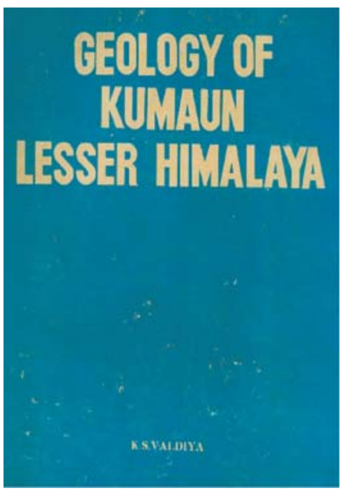

Rs.180/- (India), US$ 50/- (Abroad)

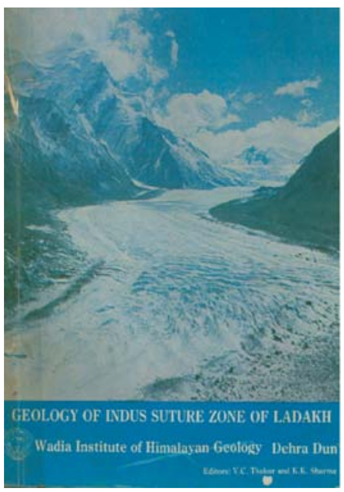

Rs.205/- (India), US$ 40/- (Abroad)

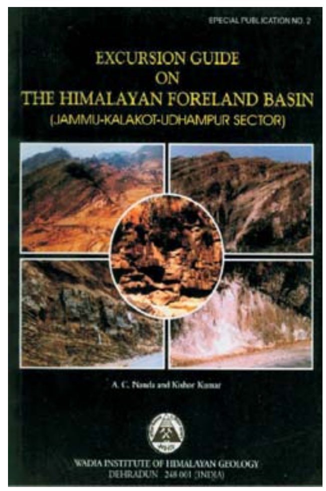

Rs.180/- (India), US$ 15/- (Abroad)

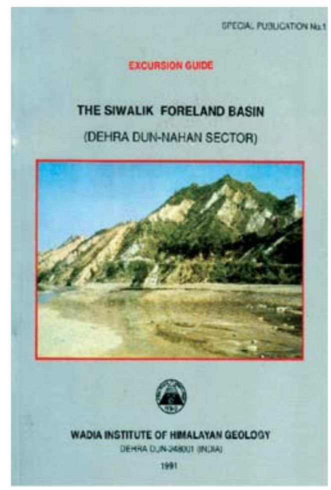

Rs.45/- (India), US$ 8/- (Abroad)

Rs.200/- (India), US$ 15/- (Abroad)

Procurement details:
Corresponding address:
The Director,
Wadia Institute of Himalayan Geology,
33, GMS Road, Dehradun 248001, India
or
Asstt. Publication & Doc. Officer
Wadia Institute of Himalayan Geology,
33, GMS Road, Dehradun 248001, India
Phone: +91-0135-2525430, Fax: 0135-2625212
Email: himgeol@wihg.res.in,
Web: http://www.himgeology.com

Cheque/Bank Draft:
Should be in favour of the
'Director, WIHG, Dehradun, India'

WADIA INSTITUTE OF HIMALAYAN GEOLOGY, DEHRA DUN
PUBLICATIONS AVAILABLE FOR SALE

HIMALAYAN GEOLOGY

(These volumes are the Proceedings of the Annual Seminars on Himalayan Geology organizsed by the Institute)

		(in Rs)	(in US $)
Volume 1	(1971)	130.00	26.00
Volume 2*	(1972)	50.00	-
Volume 3*	(1973)	70.00	-
Volume 4*	(1974)	115.00	50.00
Volume 5	(1975)	90.00	50.00
Volume 6	(1976)	110.00	50.00
Volume 7	(1977)	110.00	50.00
Volume 8(1)	(1978)	180.00	50.00
Volume 8(2)	(1978)	150.00	45.00
Volume 9(1)	(1979)	125.00	35.00
Volume 9(2)	(1979)	140.00	45.00
Volume 10	(1980)	160.00	35.00
Volume 11	(1981)	300.00	60.00
Volume 12	(1982)	235.00	47.00
Volume 13*	(1989)	1000.00	100.00
Volume 14* (in Hindi)	(1993)	600.00	-
Volume 15*	(1994)	750.00	

(Available from M/s Oxford & IBH Publishing Co. Pvt. Ltd., New Delhi, Bombay, Kolkata)

Volume 16*	(1999)	1000.00	100.00

Journal of Himalayan Geology

(A bi-annual Journal : published from 1990 to 1995)

Annual Subscription		(in Rs)	(in US $)
	Institutional	500.00	50.00
	Individual	100.00	25.00

Volume 1* (1990)
Volume 2 (1991)
Volume 3 (1992)
Volume 4* (1993)
Volume 5 (1994)
Volume 6* (1995)

HIMALAYAN GEOLOGY

(A bi-annual Journal incorporating Journal of Himalayan Geology)

Volume 17 (1996)	Annual Subscription:	(in Rs)	(in US $)
	Institutional	500.00	50.00
	Individual	100.00	25.00
	Revised Annual Subscription:		
	Institutional	750.00	50.00
	Individual	100.00	25.00

Volume 18 (1997) to Volume 27 (2006)*
Volume 28 (2007) to Volume 29 (2008)
Volume 30 (2009) to Volume 32 (2011)*
Volume 33 (2012)
Volume 34 (2013) to Volume 36 (2015)*

Volume 37 (2016)	Institutional	750.00	50.00
	Individual	100.00	25.00

OTHER PUBLICATIONS

Geology of Kumaun Lesser Himalaya, 1980 (by K.S. Valdiya)	Rs. 180.00 US $ 50.00
Geology of Indus Suture Zone of Ladakh, 1983 (by V.C.Thakur & K.K. Sharma)	Rs. 205.00 US $ 40.00
Bibliography on Himalayan Geology, 1975-85	Rs. 100.00 US $ 30.00
Geological Map of Western Himalaya, 1992 (by V.C. Thakur & B.S. Rawat)	Rs. 200.00 US $ 15.00
Excursion Guide :The Siwalik Foreland Basin (Dehra Dun-Nahan Sector), (WIHG Spl. Publ. 1,1991) (by Rohtash Kumar and Others)	Rs. 45.00 US $ 8.00
Excursion Guide : The Himalayan Foreland Basin (Jammu -Kalakot-Udhampur Sector) (WIHG Spl Publ.2,1999) (by A.C. Nanda & Kishor Kumar)	Rs. 180.00 US $ 15.00
Glacier Lake Inventory of Uttarakhand (by Rakesh Bhambri et al. 2015	Rs. 500.00 US $ 50.00
Siwalik Mammalian Faunas of the Himalayan Foothills With reference to biochronology, linkages and migration (by Avinash C. Nanda)	Rs. 1200.00 US $ 100.00
Atlas of early Palaeogene invertebrate fossils of the Himalayan foothills belt (WIHG) Monograph Series No. 1, 2000) by N.S. Mathur & K.P. Juyal (Available from M/s Bishen Singh Mahendra Pal Singh, 23-A New Connaught Place, Dehradun- 248001, Email: bsmps@vsnl.com	Rs. 1450.00 US $ 50.00

Note: 'Journal of Himalayan Geology' & 'Himalayan Geology' have been merged and are being published as Himalayan ' Geology' after 1996.
*** Out of Stock**

Life Time Subscribers for Himalayan Geology
India: Rs. 1000/- Abroad: US $ 100/=

Note: A free set of old volumes (1971-2005, subject to availability) of Himalayan Geology will be provided to the newly registered Life Time Subscriber Scheme Members for a limited time (Postage to be borne by the Subscriber).

Trade Discount (In India only)
1-10 copies: 10%, 11-25 copies: 15%
More than 25 copies: 25%

Publications: *may be purchased from Publication & Documentation Section and Draft/Cheque may be drawn in the name of The Director, Wadia Institute of Himalayan Geology, 33- General Mahadeo Singh Road, Dehra Dun – 248 001*

Phone: 0135-2525430 Fax: (91) 0135-625212 Website: http://www.himgeology.com E-mail: himgeol@wihg.res.in